गीतों का क्षण

●

अकिंचन शर्मा

●

७५ गीत-कविताएं

●

GEETAUN KA KSHAN

(poetry collection)

by

AKINCHAN SHARMA

गीतों
का
क्षण

(काव्य सग्रह)

अकिंचन शर्मा

•

मुद्रक . जॉब प्रिंटिंग प्रेस, ब्रह्मपुरी, अजमेर

प्रकाशक : राजस्थान साहित्य अकादमी, (संगम) उदयपुर

मूल्य : छ रुपया

प्रथमबार : १९६७

•

प्रकाशकीय

अकिंचन शर्मा न केवल हिन्दी के लोकप्रिय गीतकार हैं अपितु "गीतो का क्षण" मे उनकी प्रतिनिधि रचनायें सकलित की गई हैं। नयी मनोभूमियों से उपजे हुए ये गीत हिन्दी गीतो को नयी समावनायें और नये आयाम देते हैं।

"राजस्थान के हिन्दी कवि" आदि सकलनो को प्रकाशित करने के बाद अकादमी ने अपनी प्रकाशन नीति मे दूसरे दौर मे प्रवेश किया। इस दौर मे अकादमी ने अपने कृतिकारो के स्वतन्त्र सग्रह प्रकाशित करने की योजना हाथ मे ली। यह सग्रह इसी योजना के अन्तर्गत है। हमारी प्रकाशन नीति का तीसरा दौर सभवत मूल्याकन का दौर होगा। अत इसके लिये आवश्यक होगा कि पाठको व समीक्षको की निष्पक्ष सम्मतियाँ हमे प्राप्त हो। हम आह्वान करते हैं।

उदयपुर
दिनाक ३० जुलाई ६७

मंगल सक्सेना
सचिव

पिछला एक दशक, जिसमें महानगरों में रहकर भी 'महानगरी' तथा दस पांच परिवारो वाले गाँवो में रहकर भी 'ग्रामीण' नही बन सका, ऐसे असमय की रचनाए प्रस्तुत सकलन में सकलित हैं। यो चाहे 'शहर' अथवा 'आंचलिक' बोध कोई खास बिगाड़ न कर पाये हो, फिर भी इन विगत दस वर्षों में ज्यो का त्यों सही सलामत रहा, ऐसी बात नही है। इस यात्रा के हर मोड़ ने मुझे तोड़ा-मोड़ा है, ढलानों पर फिसला हूँ, तथा चढाई पर थककर चूर चूर हुआ हूँ। बदलते समय की चिलकती धूप और ठिठुराती छाया ने व्यक्तित्व को फैलने और सिकुड़ने की प्रक्रियाओ मे जीने के लिए बाध्य किया है। फिर भी मेरे अन्दर और बाहर आये हेरफेर को मैं उस तरह से नही समझ पा रहा हूँ जिस तरह से कई एक, कविता से 'नई' या अकविता तक या गीत से नवगीत अथवा अगीत तक आनन्दपूर्वक पहुँच कर समझ चुके हैं। मुझे तो सदैव टूटन में संधियो की तलाश और बिखराव मे अस्तित्व की टोह रही है, जो चाहे कितनी भी असहज क्यो न हो पर यह अक्षमता मेरे इस सकलन की रचनाओ मे परिव्याप्त है। यह मेरी सीमा है।

यह संकलन उस समय प्रकाशित हो रहा है जब कि देश के कोने कोने मे समझी जाने वाली भाषा हिन्दी, भक्ति और प्रेममार्ग को छोड़कर राजपथ पर विचर रही है। स्वभावतः आज की राजनैतिक अस्थिरता, भाषणबाजी, दांवपेच, तोड़ फोड़ और उठा पटको के समान हिन्दी साहित्य मे भी नये नये वादो, वक्तव्यो, छीटाकशी, उखाड़पछाड़, नारेबाजी और आपाधापी का प्रवर्तन हो रहा है। ऐतिहासिक रूप से भी जब हिन्दी को हमारे सविधान द्वारा सम्पर्क भाषा घोषित किया गया और इसके व्यवहारिक रूप

के बारे में सोचा जाने लगा, उन्हीं दिनों प्रयोगवादी कविता का जोर रहा। हिन्दी की पारिभाषिक शब्दावली बनते बनते, प्रयोगवादी कविता पारिभाषिक शब्दों जैसी ही जटिल नई कविता बन गई और अब अनुवाद, आलेखन और टिप्पण के असहज रूपों के समान ही नई कविता का कोई स्वरूप नही रह गया है तथा अहिन्दी भाषियों के विरोध के प्रारम्भ के साथ ही नवगीत और नई कविता का अपनी अपनी सत्ता के लिये संघर्ष विद्यमान है। उपरोक्त स्थितियों से हम इस बात का आकलन कर सकते हैं कि बीते हुए दो दशको मे हिन्दी मे अवसरवादी समसामयिक लेखन ही अधिक हुआ है। यह भी तथ्य है कि इस नियत, अनियत मुद्रित और टंकित पत्र पत्रिकाओं के मुर्दा जिन्दा बेशुमार 'पोस्टरबाजी' के दौर मे स्थायी मूल्य हमारी पकड़ से प्रायः बाहर ही रहे हैं तथा दरार खाये बड़े बडे बांधो की तरह हमारे खंडित व्यक्तित्व अपनी महिमा बघारते रहे हैं। इस प्रवाह मे कुछ बड़े लिबास वालों ने जवाहिरात, सोना अफीम, कोकीन आदि की तरह विदेशी साहित्य की भी खुलकर तस्करी की है जो निशक जिल्दबद ज्यों का त्यों हमारे आपके सामने बिखेरा जाता है। इसके अतिरिक्त स्थापना के लोलुप अहम् पीड़ित प्रवचनों को सुनते सुनते जी ऊब उठा है। इस ऊब के साथ संलग्न एक और भी 'ऊब' है जो निरन्तर अटपटी रचना प्रक्रियाओ को समझते-समझते हमारी पाचन प्रक्रिया में भयंकर गड़बड़ी पैदा करने लगी है।

अतः संकलित रचनाओ मे किसी अतिरिक्त मौलिकता का दावा नही है सिर्फ एक धुनी की तरह चलने की टेक है। हाँ ! मेरे कुछ मित्र अपने प्रातिभ ज्ञान से यह भी कहते हैं कि हर कृति में कृतिकार के जन्म जन्मान्तरो के कई संस्कार प्रवाहित होते हैं और यही संस्कार रचनाकार को मौलिकता प्रदान करते हैं। हो सकता है वे सही हो क्योकि अब यह विवाद से परे सिद्ध हो चुका है कि व्यक्ति मे पूर्व जन्म के सस्कार होते हैं। मित्रो को हक होता

है वे चाहे जो कहे पर मेरे पास अतिरिक्त मौलिकता जैसी कोई वस्तु नही है, सिर्फ एक धुन ही है अपनी तरह जीने की।

मैंने अपनी इस धुन मे सवेदनो से प्रहार खाई रागात्मक अनुभूतियो को उसी तरह प्रकट होने दिया है जैसा उनको सहज रूप ग्रहण करना चाहिये था। इसलिये रचनाओ का निजत्व सुरक्षित रह गया है और यही मेरा अपनापन है। रचनाओ के निजत्व से मेरा तात्पर्य उस सारे परिवेश से सन्निकटता है जिसमे मैं समय समय पर रहा या जिया हूँ, अर्थात सकलन की रचनाओ की सम्प्रेषणीयता उन सब तक है जो मेरे जैसे साधारण है और जिन्होने विवश होकर स्वतन्त्रता के बाद के दो दशको मे सामाजिक सास्कृतिक और राजनैतिक कम्बलो को ओढा है तथा स्वप्नदृष्टाओ के स्वप्न भग होते देखे हैं एव उत्पन्न नैराश्य को भोगा है। इस प्रसंग मे, मैं अपने जैसा साधारण उन सभी को समझता हूँ जो सृजक साहित्यकार, श्रमजीवी और पाठक हैं एव जो सभी रागात्मक, भावात्मक क्षणो को भौतिक अर्न्तद्वन्दो की स्थिति मे सजग होकर जीते हैं पर अतिरिक्त प्रबुद्ध होने या हो जाने की अपेक्षा नही करते है। यही सकलित रचनाओ की यात्रा परिधि है।

रचनाओ की सम्प्रेषणीयता के सदर्भ मे यह कहना चाहूँगा कि हमारे देश मे लेखन के आरम्भ काल से ही प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष आग्रह रहा है कि कोई भी रचना लेखक को चाहे कितनी भी वैयक्तिक क्यो न हो पर उसकी उस तरह की पैठ जनमानस मे सीधी होनी चाहिये और इसी वजह से हमारे यहाँ की बहुमूल्य कृतियो ने अनायास ही देश के सुदूर कोनो तक यात्रा की है तथा इससे हमारी भावनात्मक एकता बनी रही है। रचना प्रक्रिया की इस सहजता से अगर किसी सस्तेपन का बोध किन्ही को अब होने लगा है तो वे निश्चय ही पूंजीवादी षडयन्त्र के शिकार हैं। इसे मैं पूंजीवादी षडयन्त्र इसलिये कहता हूँ कि समाजवादी देशो मे चाहे कितने भी अकुश

लेखको पर लगाये जाते हो फिर भी वहाँ यह आग्रह बढ़ता ही जा रहा है कि सृजित रचनाओ का सम्प्रेषण साधारण मानस तक हो जिससे वह किसी भी उत्पीडन के प्रति सजग रहने की प्रेरणा ग्रहण कर सके तथा उनकी अपने देश की मिट्टी से सम्बद्धता बढे एव व्यक्ति, व्यक्ति से प्रतिबद्ध हो तथा शोषण, घुटन नैराश्य, कुण्ठा और विसगतियो से उसे त्राण मिले। दूसरी तरफ पूंजीवादी देशो के पूंजीपति यह अच्छी तरह से जानते हैं कि उनके स्वार्थ तभी तक सुरक्षित है जब तक साधारण जन किये जाने वाले शोषण के प्रति सजग नही होता है, तथा वे यह भी समझते हैं कि जनमानस को सही दिशा देने मे हर लेखक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। अत पूंजीवादी समाज सृजक साहित्यकार को बाधित किये रखना चाहता है। इस प्रकार बाधित किये रखने के लिए, उसने समस्त प्रचार साधनो पर, जिनमे टेलीविजन, रेडियो, समाचार पत्र और साहित्यिक पत्र-पत्रिकाये प्रमुख है, अपने आर्थिक स्रोतो द्वारा कब्जा कर रखा है जिससे लेखको की वाणी मुक्त मुखरित न हो सके। इसके अतिरिक्त इन प्रचार साधनो के सचालक और सम्पादक वे ही है जो बाधित किये जा चुके है। अत. लेखक का उत्पीडन के प्रति आक्रोश तथा जन मन के सामीप्य की जिज्ञासा जो रचनाओ मे उद्घोषित होती है अप्रत्यक्ष रूप से ऐसे सांचो मे ढालने के लिये बाध्य की जाती है जो सीधा प्रहार न कर सके तथा जो बाधित सचालको और सम्पादको के मनोनुकूल हो एव जिससे पूजीपतियो के हित सुरक्षित बने रहे। इस क्रिया से पूंजीपति वर्ग अन्य सामाजिक और राजनैतिक प्रवृतियो को भी बाधित करता है जिसका उल्लेख यहाँ आवश्यक नही है।

आजादी के बाद सास्कृतिक आदान प्रदान के लिए हमारे लेखको ने जब इन पूंजीवादी देशो की यात्राये की तो वे वहाँ की भौतिक सम्पन्नता से प्रभावित हुए तथा उपरोक्त बाधित लेखन जो उन देशो मे प्रचलित था अपने साथ लाये। यहाँ के पूंजीपतियो ने इन लेखको को ऊँचे दाम पर खरीदा

और आज वे बाधित लेखक धनपतियों द्वारा संचालित साहित्यिक पत्र पत्रिकाओं के सम्पादक हैं। अब हम लेखक जिस आक्रोश का संदर्भ देते हैं, जिस कुण्ठा, उलझन, नैराश्य और विसंगतियों की चर्चा करते हैं वह इन सम्पादकों द्वारा प्रेरित साँचों में ढलकर और पूर्णत. बाधित होकर प्रकाशित होता है तथा पारिश्रमिक का संलग्न मोह हमें मौन रखता है। अतः आज की रचनाओं का प्रसार लेखक से लेखक तक सीमित रह गया है। साधारण आदमी का उसके प्रति कोई आकर्षण नहीं है। इस प्रकार आज का पाठक-वर्ग सस्ते प्रसंगों को जोता है तथा लेखक अतिरिक्त प्रबुद्ध पाठक को तलाश करता है जो उसे कहीं नहीं मिलता है। उपरोक्त विषम स्थितियों में, सकलन की किसी रचना को प्रबुद्ध पाठक की तलाश नहीं है। जो भी निवेदित है शालीनता से निवेदित है। कुछ रचनाएँ मनन के क्षण प्रदान करती हैं तो कुछ सहज उत्फुल्लता के। कहीं हास्य व्यंग का प्रसग है तो कही कचोट खाये मन को पुकार और कही परिवेश के प्रति मेरी प्रतिबद्धता निहित है। संकलन का स्वरूप पारिवारिक भी है और एकनिष्ठ भी। प्रायः सभी रचनाओं का प्रवाह एक वैचारिक बिन्दु तक है। अतः किसी एक पद या पंक्ति में रचना की गरिमा निहित नहीं है तथा किसी एक रचना से सारे सकलन का व्यक्तित्व भी नहीं जुड़ा हुआ है।

संकलन की रचनायें मेरे उन क्षणों की हैं जिन्हे मैंने गीत लिखने के उपयुक्त समझा। इसलिये पुस्तक का नाम भी 'गीतों का क्षण' रखा है। सकलन मे वह सब आयातित नहीं है जो किसी एक कहानी, उपन्यास अथवा छंद रहित कविता मे लिखा जाता है या लिखा जाना चाहिए। आज की छन्द रहित कविता जिसे 'नई कविता' कहते हैं उसके जैसा बिखराव, लयहीनता, यौन विकृतियाँ, बाधित सम्प्रेषणीयता और गद्य सस्कार का भी सकलित रचनाओं मे अभाव है। किन्तु, नई कविता के प्रस्तुतीकरण की नवीनता, धरातल और क्षितिजों ने अवश्य अनुप्रेरित किया है जोकि इस विधा को हिन्दी काव्य को

समग्र देन है। सग्रह की रचनाओ मे 'नवगीत' की तरह छन्द-हीन छन्दो मे नई कविता के कथ्य और शिल्प की ठूँसाठासी भी नही है और न किसी आन्दोलन का स्वर है जो नवगीत-कार नई कविता के विरुद्ध उठाते हैं। क्योकि प्रश्न कविता या गीत को नया नाम देने का नही, वरन प्रश्न नयी भूमि तैयार करने का है, जो नया नाम देने से नहीं, नये परिवेश को जीने और पचाने से प्राप्त होगी। अत 'गीत' शब्द ही स्थिति बोध के लिये पर्याप्त है। आज के यांत्रिक युग का सत्रास तथा वैज्ञानिक उपलब्धियो का सकारात्मक विश्वास और नकारात्मक सशय जिसे हम भोग रहे हैं और उसमे से जितना हम सहज स्वीकारते हुए आत्मसात करते चलते हैं उतनी ही आधुनिकता' और गति युग की रचनाओ के लिये आवश्यक है। मेरे गीतो मे अपने आप जहाँ भी ऐसा परिवर्तन आया है वही उन्हे आधुनिक बनाता है किसी आन्दोलन से जुडना नही।

गीतो का सीधा सबध गुनगुनाहट से है। यह गुनगुनाहट को लय अनुरूप शब्दमय होकर होठो के दो तटो को चीरती है। ये तट मूलप्रवृतियों और परम्पराओ से सस्कारित हैं। होठ टूटेंगे नही किन्तु यह टूटन गुनगुनाहट को दिये गये नये शब्दो से प्रकट होगी। अत गीत को अपनी परम्परा से हटना उतना ही आवश्यक है जितनी गुनगुनाहट से सम्बद्ध नये रागात्मक भावबोध को नये शब्दो की आवश्यकता हो। अति प्राचीन और अति नवीन के बीच का ही रास्ता गीत का रास्ता है। साहित्य की अन्य विधायें जिनका रागात्मक गुनगुनाहट से सम्बन्ध नही, विच्छिन्न स्थितियाँ ग्रहण कर सकती हैं गीत नही। बदलते परिवेश का सानिध्य प्राप्त करने के लिए गीत के परिवर्तित कथ्य को स्थितिनुकूल कवि की रागात्मकता ग्रहण करती चले यही पर्याप्त है। कोई पूर्व सिद्धान्त गढकर सृजन करना बहुत गलत होगा क्योकि गीत की इयत्ता स्वाभाविकता मे है विरलता मे नहीं। गीत की स्वाभाविकता ही उसकी लोकप्रियता का कारण है किन्तु यह लोकप्रियता किसी

कवि सम्मेलन की तात्कालिक 'दाद' से नहीं आंकी जा सकती है। यह तो पाठक और श्रोता के मन की उस कुरेदन से पहचानी जा सकती है जिसे वह कवि की अनुपस्थिति में रचना से सदर्भित होकर सम्बोधित करता है। गीत की इस स्वाभाविकता को आज प्राय इसलिये सायास नष्ट करने का उपक्रम किया जाता है कि गीत के बाद के भी किसी और गीत की स्थिति या किसी जन्मने वाले युग के गीत की स्थिति किन्हीं गीतकारों के दिमागों में रहने लगी है। इस परिकल्पना को रचनाकार की मानसिक कुण्ठा के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है क्योंकि किसी विधा की कोई सायास स्थिति नहीं होती है। रचनाकार को आज के यन्त्र युग से सामजस्य स्थापित करना है और वैज्ञानिक उपलब्धियों की गति ग्रहण करनी है इसके लिए रचनाओं में कलपुर्जों का वर्णन आवश्यक नहीं है, आवश्यकता है आज के वातावरण के प्रभाव के प्रतीकात्मक वर्णन की। एक और भ्रम है कि गीत कवि की अन्तरग मनोभूमि से उत्पन्न होता है अत वह उसका 'निजी' है। पर यह सही नहीं है। कवि की अन्तर्निहित तहों का सघर्षण और भावात्मक परिवेश तो गीत को सिर्फ निजत्व' देता है अर्थात् उस जैसे परिवेश में सभी के लिये 'अपनाभाव'। इससे गीत कवि का 'निजी' नहीं होता, उसे तो इसे भौतिक आस्थाओं के बहावों पर तिरोहित करना ही होगा और तभी गीत की व्यापकता सिद्ध होगी। यही वह बाध्यता भी है जिसके लिये गीत को युग सत्य के अनुकूल बनाने के लिए और व्यक्ति की आन्तरिक स्थितियों की सटीक अभिव्यक्ति के लिए, नये बिम्ब और प्रतीक ग्रहण करना आवश्यक होता है तथा यही उसकी आधुनिकता की तुला भी है जिस पर उसका सारा सौन्दर्य बोध तोला जा सकता है। गीतकार को कभी कभी अन्तर्मुखी होने के स्थान पर बहिर्मुखी भी होना पडता है जबकि वह स्थान स्थिति बोध युद्ध भूख, अकाल आदि भौतिकता का मात्र व्याख्याकार होता है मनोविश्लेषक नहीं, क्योंकि उसे सम्बन्धों की सनातनता निभानी पडती है। यद्यपि बहिर्मुखी

स्थितियाँ गीत का वातावरण नही है तथापि गीत में भी आता है किन्तु यह गीत की नियति नही है। गीत जीने की जिजिविषा है, पलायन की उदासी नहीं।

प्रस्तुत सकलन की सभी रचनाए छन्दवद्ध हैं। अनुभूति की तीव्रता के अनुकूल छन्दो का विस्तार या सकुचन हुआ है किन्तु किसी गीत को आधुनिक कहलाने के लिए मैंने यह आवश्यक नही समझा है कि छन्द रहित वाक्यों का छन्द गढा जाये जिसमें अन्तत: तुक की टोह हो। क्योकि जहाँ मुझे लगा कि कोई अनुभूति छन्द रहित ही जन्मेगी वहाँ वैसा ही किया, किन्तु ऐसी रचना को मैंने कविता कहा गीत नही। मुझे ऐसा लगता है कि गीत और कविता की भूमि अलग अलग है तथा दोनों विधाए भिन्न है। यहाँ यह भी मैं नही मानता कि गीत ही गीत लिखे जायें कविता का बहिष्कार किया जाये, या गीतो का वहिष्कार हो और कविता ही कविता लिखी जाये और उसे युगानुरूप कहा जाये। मैं यह भी नहीं मानता कि गीत 'गौण' है कविता प्रमुख या कविता गौण है गीत प्रमुख। साहित्य की सभी विधाओ की लेखको की क्षमतानुसार स्थितियाँ हैं जो कभी समानान्तर और कभी आगे पीछे होती रहती हैं। संकलन की रचनाओं के छद अनुभूति की तीव्रता और कथन की भंगिमा के अनुरूप बने ढले है, उनको गढा या जड़ा नही गया है।

मैंने सकलन की किसी रचना का विशेष उल्लेख भी आवश्यक नही समझा है क्योकि यह पाठकों और आलोचकों के लिए व्यवधानकारी ही होता। सकलन मे पिछले दस वर्षों में लिखी रचनाएं संकलित हैं और यह मेरा दूसरा सकलन है जो पहने काव्य सग्रह 'वादल प्यास अँगारे' की तरह ही किसी आन्दोलन से जुडा हुआ नही है। न तो मैं गीत को नवगीत कहने की स्थिति मे हूँ और न ही नई कविता को हिन्दी कविता की नियति। नई कविता ने हिन्दी के काव्य को नई भूमि दी है इसी पर यदा

कदा गीत भी बिखर जाते हैं, यह कोई अतिक्रमण नहीं है और न ही उस भूमि पर अंकुरित होना। दोनों विधाओं की प्रतिष्ठा अलग अलग है।

अंत में, मैं राजस्थान साहित्य अकादमी का आभारी हूँ जिसने यह कृति प्रकाशित की।

सभी के प्रति आदर साहित

शरद पूर्णिमा
१८ अक्टूबर '६७
६२, पांच बंगला रोड, अजमेर

अकिंचन शर्मा

आभार

किसी सर्चलाइट का
अटोहो के लिए
जलकर बुझ जाना
और यति के लिए
भागती हुई रेल गाडी की
सीटी का दौडकर डूब जाना
मेरी यह सीमा
और तुम्हारी असीमा
मेरी प्रिय पत्नी
और दुधमुहे सपनो
तुम्हारे ही सग जी सका
मैं यह निरन्तर्य
यह गीतों का क्षण

समर्पण

जब कभी
तपती शिला पर चदनी झोका ठहरा
और
व्याध से बचा हिरन ऊँची घास छलाँगता हुआ
सुखद सघन वन मे प्रवेश कर गया

जब भी मेंहदिया करतला से
साँझ
ताल दिन के लहर तनावो को सहलाने लगी
और एक मछली उझककर गहरी उतर गयी

जब कही अलाव जले
और दूरस्थ कुटिया ने सितारो के टपकने से पहले
द्वार दीप
आँगन मे छुपा लिया

तब
ओ मेरी रुग्णा माँ
व्याकुल पिता
आतुर भाई बहिनो
मैं भी लौटा
सुधियाया शापित यक्ष
यत्र युग की समस्त असाधियो और दूरियो को
अपने सस्कारो और
तुम्हारे स्नेह से भरता जोडता हुआ
और दे गया तुम्हे, यह
'गीतो का क्षण'
फिर फिर आने-जाने के लिए



मैं देह से बाहर निकलता हूं

गीतों का क्षण

राह यह काँसे कड़ूलों की

पंथ धूल का निर्मल दर्पण

केवल दर्द आचमन मेरा

यार बसंत

कल्पना तुमने मुझे दी

●●

गीतो का क्षण

•

अकिंचन शर्मा

•

देह से बाहर निकलता हूँ

प्यास हर गुँथ जाय जोड़े टूटते धागे
पीर तन रम जाय इतने और दुख माँगे
देह से लिपटे तुम्हारे गीत गन्धित क्षण
प्राण ! मुझ को ले चले हैं वक्त से आगे

देह से बाहर निकलता हूँ

आज तक निगले हुए हीरे उगलता हूँ।
मैं देह से बाहर निकलता हूँ।

टोकरी को फूल देकर
वे हवायें माँगता हूँ
निर्गन्ध हो जिन के लिए
नींद में भी जागता हूँ

वे जिन्हे मैं दौड़कर भी छू नही पाया
पर लबादे सी सदा ओढे रहा माया
नीम-महुओ मे जिन्हे कुछ स्वाद से परखा
जिन पर्वतो को बादलो का पाग घर निरखा

चरण दे अब उन शिखर की सीढियो को मैं,
आ ढलानो पर कही फिर फिर फिसलता हूँ।
मैं देह से बाहर निकलता हूँ॥

धूप के नाखून जिन ने
चीर डाले कल अँधेरे
कागरो के हो न पाये
आज वे हिंसक उजेरे

आँख ने जिन को चबाया, जीभ ने देखा
हाथ लूले सृष्टि रचने का मिला ठेका
चौखटो मे बोलती तस्वीर यह अपनी
सीकचो म बद सारी उम्र की कथनी

गिडगिडाकर गीत यूँ क्यो गद्य के होंगे,
नेत्र देकर रोशनी अपनी बदलता हूँ।
मै देह से बाहर निकलता हूँ ॥

ऋतु ऋचायें पढ चुके वे
होठ पत्त टूटते हैं
प्रीत गाये गधको के
सोत पीछ छूटते हैं

डाँगरो के रोदने से व्यथित अकुर मन
बैठ खूँटो के लिए बटता नही अब सन
अब न पजो मे कुरेदी भूल आती है
मैं वहाँ हूँ यात्रा जब मोड खाती है

आह ! सब पुर्जे गलत सयत्र के ढाले,
फाड नक्शे भट्टियो मे फिर पिघलता हूँ।
मैं देह से बाहर निकलता हूँ ॥

•

कहानी मन की

लिख लिख हारा लिखी न जाती
अधरों पर अटकी रह जाती
सुलझाये से सुलझ न पाती
उलझी हुई कहानी मन की ।

सुख अनगिन है दुख इतना सा
जैसे तारों में ध्रुवतारा
जैसे फूलों की केशर में
मौन सो रहा हो अंगारा
वंशी के स्वर ज्यों बँसवट में अनजाने भटके फिरते हों

वैसे ही अब तलक अपरिचित
कोई पीर अजानी मन की ।
उलझी हुई कहानी मन की ॥

रह एकान्त गुना कोलाहल
जैसे दीपक और अँधेरा
पहुँचो गगन उडानें लेकर
धरती का सदेसा मेरा

तह से तह तक डोल चुका हूँ राज़ अनेको खोल चुका हूँ

पर लगता ज्यो मिली न खोई
खोई हुई निशानी मन की।
उलझी हुई कहानी मन की ॥

ओ प्रबुद्ध विपपायी अन्तर
तू ने मुझे अधूरा छोडा
अपने आप भ्रमित हूँ इतना
मोती को पत्थर से तोडा

समझदार अतिरिक्त हुआ मैं, हूँ आश्वस्त तर्क से लेकिन

कब से निर्णयहीन दृष्टि को
मथती सरल मथानी मन की।
उलझी हुई कहानी मन की ॥

•

यह अभाव

मरकट एक गिलहरी दो दो, सीताफल सौ बीज का।
चुभने लगा अचानक मुझ को यह अभाव किस चीज का ॥

सेतु समझ कर बाँध दिया है
दोनो ओर किनारो से
हमने संशय लिया उफनती
दौड चली जलधारो से

बहती नैया प्रश्न कर गई अनलाँघी दहलीज का।
चुभने लगा अचानक मुझ को यह अभाव किस चीज का ॥

अंगूरों की ओर देखता
आम मौन बिन बौरों का
झरबेरों से परिचय करता
कांटा अपनी दौरों का

सिर नंगा आकाश रह गया रितु चक्रों की खीझ का।
चुभने लगा अचानक मुझ को यह अभाव किस चीज का॥

चहरे याद नहीं आते हैं
ताड़ तने आकारों में
हाथ लगे बस फैन फूटते
तीर टूटते ज्वारों में

शब्द पसीजा हुआ छू गया जाने किस रिस-रीझ का।
चुभने लगा अचानक मुझ को यह अभाव किस चीज का॥

●

गीतो का क्षण बीत न जाये

चलते रहे पैर ये घायल सुबह शाम के मारे।
शायद कभी भटक लग जाऊँ मैं भी द्वार तुम्हारे॥

रोपा बिरवा नया नया नित
रोज फसल मुरझाई
फिर भी भरी ज़िन्दगी! मैं तो
बजा रहा शहनाई

पलको मे आकाश डुबो कर
सारा सचित पुण्य समोकर
आँसू कही ढुलक ना जाये
लाया मोती पिरो पिरो कर

पर तब तक लय अर्थ हो गये
जगने वाले सभी सो गये

मिले दिनो के चौराहो पर दागदार उजियारे।
चलते रहे पैर ये घायल सुबह शाम के मारे॥

पुजने लगे विवादी काँटे
महक फूल की बीती
युग के युग की प्यास बुझाने
चली गागरी रीती

पनघट को आवाज लगाई
सागर को दे उठा दुहाई
लेकिन तृप्ति ओस की होकर
तब तक होठों पर फिर आई

सब संक्षिप्त सभी अनबोले
सब की नैया में हिचकोले

पेचदार अब सभी रास्ते संगी कौन पुकारे।
चलते रहे पैर ये घायल सुबह शाम के मारे॥

क्या वृन्दावन! दूर बहुत हो
यमुना का जल सूखा?
तन से भूखा रहूँ भले ही
मन से रखो न भूखा

गीतों का क्षण बीत न जाये
घाटी भर अनुगूंज सुनाये
दर्शन बोल रहा माटी का
कोई कहीं नहीं भरमाये

सब से अलग विरासत पाई
हम को गुफा कहाँ ले आई

दिखलादो अब सब को निधिवन, सेवाकुंज हमारे।
चलते रहे पैर ये घायल सुबह शाम के मारे॥

•

ठंडी छुअन : नीले होठ

ठडी छुअन तुम्हारी।
हम ने देह उतारी॥

हिम खडो की घाम
उगा अपरिचित नाम

साँस खीचती घाटी—
सारी रात पुकारी।
ठडी छुअन तुम्हारी॥

ठंडी छुअन

लाखो आँख गगन
दुबके नग्न सपन

घूँघट दिये, उमरिया—
उघरी हुई गुजारी।
ठडी छुअन तुम्हारी॥

नीले होठ

तुम ने प्रश्न किये
हम ने प्रश्न किये

उत्तर नही लिये ।

जगते रहे भरम
करते रहे गरम
खोई हुई दृष्टि से हम तुम-
पढते रहे करम
तुम ने जहर जिये
हम ने जहर जिये

नीले होठ सिये ।
उत्तर नही लिये ।।

•

आँज लिया विश्वास सृजन का

कृति से बडा नही होता है कोई भी इतिहास तपन का ।
इसी लिए गीली पलको मे आँज लिया विश्वास सृजन का ।।

नरम देह भीगे कपडे सी
ऍंठ ऐंठ कर गई सुखाई

अरगनियो पर आडा तिरछा
टाँग गई जग की उजलाई

कितने चश्मो ने नित झाँका
तरह तरह से तोला आँका

टाँक दिये कोने कोने पर लोगो ने अनगिनत सितारे,
तब जाकर आकार ले सका यह मेरा आकाश लगन का ।
कृति से बडा नही होता है कोई भी इतिहास तपन का ।।

कितनी प्रतिबिम्बित गहराई
कितना कहाँ अँधेरा जल है

कितनी देर घुटा दम मेरा
कितना हाथ लग सका तल है

कितनी बात कह सका अपनी
कितनी करनी कितनी कथनी

कितने पाँव पंक के भीतर मत पूछो पुरइन से लेकिन,
जितना रूप खिल सका उतना सरवर भागीदार सपन का।
कृति से बड़ा नहीं होता है कोई भी इतिहास तपन का॥

आगे एक अकल्पित दिन है
पीछे गाथा सुनी सुनाई

किन्तु आज जितना जीता हूँ
है उतना क्षण बोध सचाई

पर इतना भी लिखा न जाता
अनुभव शब्द नहीं गढ़ पाता।

हो सकता है आगे चल कर मंजिल पड़े दिखाई मुझको,
किन्तु सुरक्षित आज पथ की माटी को अधिकार नमन का।
कृति से बड़ा नहीं होता है कोई भी इतिहास तपन का॥

•

चिन्ता है

चिन्ता है चुकने की
चल चल कर रुकने की
आले पर रखे हुए दीपक के बुझने की।

चोटें जो सहली है
गा गा कर कहली हैं
सपनो की गगायें
पलको से वहली है

चिन्ता दम घुटने की
सज सज कर लुटने की
होठो पर चिपकाये बोलो के छुटने की।
चिन्ता है चुकने की॥

महलो से भागी है
सडको पर जागी है
उम्र अध गलियो मे
भटकी है दागी है
चिन्ता घर घुसने की
डिब्बो मे ठुसने की
जोखो के देशो मे हड्डी तक चुसने की।
चिन्ता है चुकने की॥

पाँव थके दौडो के
हाथ बँधे होडो के
शीश तिलक लानत का
कमर घाव कोडो के
चिन्ता अब उठने की
आँखो के खुटने की
तनने के उपक्रम मे बार बार झुकने की।
चिन्ता है चुकने की॥

•

सपने कटे परों के

अब दूरियाँ मिटाओ
मिल साथ गुनगुनाओ
करीं करो न गाँठें यों ही भरम भरम में।

टूटे हुए क्षणों की बुझती हुयी पुकारें
किस आँख से निहारें, किस हाथ से दुलारें
भ्रम का जहाँ उजाला, अनुमान का अँधेरा
कब तक वहाँ खिलेंगी सदिग्ध ये बहारें

चिलमन जरा उठाओ
सन्देह तो मिटाओ
हम दूर हट चुके है यों ही शरम शरम मे।
अब दूरियाँ मिटाओ...

जाले पड़े झरोखे, पड़ता यही दिखाई
ज्यों हार गई पीढ़ी, खंडित खड़ी इकाई
मौसम घुटे घुटे से, विश्वास तक लुटे से
सपने कटे परों के करते गगन चढ़ाई

सामर्थ मत भुलाओ
अस्तित्व को जगाओ
कुंठित अहम् मचलता युग के चरम करम में।
अब दूरियाँ मिटाओ ..

रत राह टोहने में मझधार की रवानी
आग्रह करें न ज्यादा पगडण्डियाँ पुरानी
जो स्रोत नये फूटे सरवर उन्हें समाये
संक्रान्ति के समय में गँदला करो न पानी

सीली हुई प्रथाओ
मत आग को बुझाओ
चलते चरण न बाँधो झूठी रसम क़सम में।
अब दूरियाँ मिटाओ...

जो मौन मुग्ध आतुर रुकने लगे न छैनी
वह तैरती तरंगिन अटके न दृष्टि पैनी
दूषित करो न नारे, जिनको लगन उचारे
स्वर साधने खड़े हैं ब्रह्माण्ड की नसैनी

मत बात को घुमाओ, सीधी गली दिखाओ
अब वक्त जो बदल दे इतना अलम कलम मे।
अब दूरियाँ मिटाओ...

•

अनकहनी

पूछो मत, अनकहनी जितनी है
रहने दो।
रहने दो॥

धसने दो पैरों को
यहाँ यही होना है
पिट पिट कर और मुझे
पोलापन खोना है
अच्छी यह शुरूआत हारों को
सहने दो।
सहने दो॥

प्रश्नों के नगरों में
उत्तर बिन जीते हैं
होंठों की प्यास आज
पलकों में सीते हैं
परकोटे बालू के हिलते हैं
ढहने दो।
ढहने दो॥

लहरों में लावा भर
धारायें चलती हैं
कूलों के कटने की
घड़ियाँ कब टलती हैं
तिनके को वेगों के निर्णय पर
बहने दो।
बहने दो॥

●

मै क्या करूं

यह प्रवाहित ज़िन्दगी का स्वर,
आप तक पहुँचा नही।
मैं क्या करूँ ।।

अहम् की फौलाद ढाली देह मे
मैं कही गलता रहा, मुडता रहा
रोज़ उल्कापात के सपने शकुन
पख मे भरता रहा उडता रहा

सूर्य दिन की सब कलायें जान कर
दाँत काटा क्षण जिया कुछ ठान कर
फिर बहा मैं टहनियो से बीज तक
अधपके व्यक्तित्व की हर खीझ तक

पर जुआरी सत्य यह तप भग,
ताप तक पहुँचा नही।
मैं क्या करूँ ।।

नाद यह ब्रह्माण्ड अनटोहे क्षितिज
एक अचरज दखवत करता हुआ
विस्फोटता अणु अनुभवों का श्रम
चल रहा मैं शतयन बजता हुआ

यह नारदा सी डोलती हर तान
नित सौर मण्डल भाँकता विज्ञान
यह सृष्टि तम्बूरा जगाये गान
नित गुनगुनाते चल रहे अनुमान

व्यापता पर घुंघरुओ मे भ्रम,
माप तक पहुँचा नही ।
मैं क्या करूँ ।।

धूल फाँकी आँधियाँ, चन्दन पवन
नयन मे डूबो-तिरी विप्लव तृषा
नोंचते सवेदनो की उम्र यह
रोगटो मे फुरफुरी कुछ अनलिखा

जो रहा, ज्यो एक मछरी सिन्धु को
चित्र मे खोये हुए हर बिन्दु को
यह अनेको ग्रन्थियो के बीच मन
मुकुट से सिर पर धरे सघर्ष प्रण

पर उफनता रक्त यह आक्रोश,
माप तक पहुँचा नही ।
मैं क्या करूँ ।।

•

विवशता : बोध

तोल तुले

कितने तोल तुले।
कोई मोल बुले॥

बहुत अकेली धूप खड़ी है
दरके दिन की व्यस्त घड़ी है
एड़ी घिसते हुए समय की
आँखों मे चुप सड़क गड़ी है

पक्का हुआ न सौदा अब तक
सारे हाट खुले।
कितने तोल तुले॥

दाने पके भूख से शकित
शक्लें दिखी भीड़ मे टकित
नये नये सदर्भ ओढती
कृतियाँ मुहर मुहर की अकित

भावुकता की ध्वजा उठाये
उड़े किधर बगुले।
कितने तोल तुले॥

फर्श पड़ी है बेड़ी

छत ने फेंके फाँसी फंदे
फर्श पड़ी है बेड़ी।

घुटनों पर ढोलक की थापें
मसनद पर आलाप
जीता अलग अलग कोनों में
घटता बढ़ता ताप

दीवारों की खुरच रही है
छाया आड़ी टेढ़ी।
फर्श पड़ी है बेड़ी॥

जिल्द भागवत, पर परदों पर
लहर रहा रोमांस
शुतुरमुर्ग की तरह बीतता
सुस्त समय अधिकांश

बोध एक ही, बजे बाँसुरी
नित चाहे रणभेरी।
फर्श पड़ी है बेड़ी॥

•

तिरस्कार को देखा गाकर

तिरस्कार को देखा गा कर
लघुता गैरो की अपनाकर

कही न कडुवी लगी जिन्दगी अधरो पर बुन कर देखी है ।

गोते खाता हुआ भीड मे
निकल पडा ज्यो दन्त कथायें
सुरमे सी छू गई अजाने
चहरो की रगीन हवायें
पर परिचय जो हुए न गहरे
देते रहे रात दिन पहरे

आह ! पराया कह कर जिन से बचने का साहस कर बैठा
उनकी पगध्वनि अब गीतो की सरहद पर सुन कर देखी है ।
कही न कडुवी लगी जिन्दगी अधरो पर बुन कर देखी है ॥

उस दीवट तक पहुँच न मेरी
होता जिस के लिए सवेरा
मैं उन मे से हाथ न आता
जिन के अपना स्वयं अँधेरा
हार मुझे यह लगती प्यारी
बे परदा अनसजी सँवारी

अतिरंजित सपने चुभते है अपनी चुभन नही दर्दों मे
मैंने तो पग गची काँकरी पलकों मे चुन कर देखी है।
कही न कड़ुवी लगी जिन्दगी अधरों पर बुन कर देखी है॥

उतर रहे हैं पंख गगन से
आज धरा पर पूजन वेला
हर पुकार से अधिक सुरीला
लगता है धानो का हेला
जीवन वहाँ जहाँ अफसाने
सुख दुख जिस के ताने बाने

अनहोने मौसम झेले है ओढन से कुछ नही शिकायत
मैंने तो हर सूत गुने स्वर, रुई स्वय धुन कर देखी है।
कही न कड़ुवी लगी जिन्दगी अधरो पर बुन कर देखी है॥

डूबा दिन : ठहरा मन

दिन डूबा सोगया—
हार कर डाल पर,
ठहर गया मन किसी अपरिचित ढाल पर ।

आया याद रबड़ सा खींचा हुआ गगन
फिर कोई बिरवा अनसींचा अडिग मगन

आज अकेलेपन से—
इतना विचलित हूँ,
जैसे कोई ठोके के कील कपाल पर ।
ठहर गया मन किसी अपरिचित ढाल पर ।।

सुधियाये उत्तर नादान सवालो के
लहर निगलते जबड़े कुछ घड़ियालो के

खोल रहा हूँ पाल—
किनारे वाले सब,
चाकू अटका दिये खोजकर जाल पर।
ठहर गया मन किसी अपरिचित ढाल पर ॥

सूरज ने जो दिया आग है पीने को
फुलझड़ियो सी नही कहानी जीने की

चीखो वाली नीद—
टूटकर फिर सो ले,
तुझे सोचना तड़के उगे अकाल पर।
ठहर गया मन किसी अपरिचित ढाल पर ॥
दिन डूबा सोगया हार कर डाल पर ॥

•

गीतों का क्षण

पाटल छेड़े हिरन छलांगे, पीपल छनती धूप
गुने पुकारें बीनी भीनी उर वशी का सूप
चदन झोके ठहर खोलते पृष्ठ अनेको पत्त
गीतो का क्षण सदन भर गया प्राण तुम्हारा रूप

वासन्ती पवन

सरसों की चूनर लहराता
बौरों का बचपन दुलराता
गाता गुंजन गीत गगन तक,
ओ वासन्ती पवन तुम्हारे साथ चलूंगा मैं।

यह गर्वीला गाँव गंध का
लगता यहाँ रूप का मेला
लेकर सारी प्यास उम्र की
खो जाऊँ मैं कहीं अकेला
किसी लता की लट सुलझा दूं
किसी शूल का दुख बहला दूं

मुस्कालूं पल भर को मैं भी,

ओ पाटल के सपन तुम्हारे देश खिलूंगा मैं।
ओ वासन्ती पवन तुम्हारे साथ चलूंगा मैं।।

कंचन किरण द्वार पर अविचल
महक रही है मन की मँहदी
कुछ अनबूझी बात नजर ने
शर्माकर दर्पण से कहदी
कुंकुम छूने लगी आस को
केशर भरने लगी सांस को

जीने लगी जिन्दगी मेरी,

ओ कस्तूरी लगन तुम्हारे पास रहूँगा मैं ।
ओ बासन्ती पवन तुम्हारे साथ चलूँगा मैं ॥

यह आस्था की मेरी दुनिया
जिसके लिए यहाँ जीता हूँ
केवल अमृत रहे विश्व मे
विष मेरे बट मे, पीता हूँ
टिमटिम जलते मगन सितारे
सभी दीप हैं मुझको प्यारे

यूं ही हँसता रहा दर्द तो

ओ साधो के गगन एक दिन चाँद बनूंगा मैं ।
ओ वासन्ती पवन तुम्हारे साथ चलूँगा मैं ॥

•

जाड़े की धूप

ओ शरमीली, मुखर, हठीली
ओ जाड़े की धूप रसीली

गरमादे गाते निर्भर को सोये सरवर को लहरादे।

गहन अँदेसों का कुहरा है
खिलती कलियों पर चहरा है

थकी मुडेरो पर बैठी हैं सपनाती आकाश उड़ानें
गुजन का लहजा बारूदी क्या होगा कैसे अनुमानें

झिझक रहा पुरवैया झोका
जैसे शकुन सोचते टोका

खोलो सभी झरोखे खोलो
स्याह सहन के बहम टटोलो

भ्रम का असर मिटे तेजाबी,

सहला दे हारे पखो को, धूमिल नजरो को नहला दे।

ओ शरमीली, मुखर, हठीली।
ओ जाडे की धूप रसीली॥

अन उछले तालो के गोते
सकोची घट देह डुबोते

अधरो पर पपडी पडती है, प्यास अनिश्चित है नकली है
बूंद बूंद पर जाल बिछे हैं पानी मे बदी मछली है

ओ तट के सिन्दूरी हेला
भीड बहुत व्यक्तित्व अकेला

गुन दे लहर लहर की साँसें
जन्मे नये सिरे से प्यासें

तिरने लगे कामना उजली,

गोताखोरो की मुट्ठी मे माटी के सपने उजला दे।

ओ शरमीली, मुखर, हठीली।
ओ जाडे की धूप रसीली॥

आओ नरम दूब पर डोलें
संगत का क्षण पर्तें खोलें

सहलायें ठिठुरे गमले को, खड़ी फसल की सुनें कहानी
पाले का संदर्भ नहीं दे सूर्यमुखी बिरवा अभिमानी

ओ कुनकुने प्रहर वरदानी
सर्द न हो नस नस का पानी

गहे न उर तस्वीरें खण्डित
रहे न नेह–टेर अब कुण्ठित

सीले सृष्टि चीर ना धानी

मुड़ले टूटे हुए रास्ते जुड़ने की मंजिल बतला दे ।

ओ शरमीली मुखर हठीली ।
ओ जाड़े की धूप रसीली ॥



झिझक रहा पुरवैया झोका
जैसे शकुन सोचते टोका

खोलो सभी झरोखे खोलो
स्याह सहन के बहम टटोलो

भ्रम का असर मिटे तेजावी,

सहला दे हारे पखो को, घूमिल नजरो को नहला दे ।

ओ शरमीली, मुखर, हठीली ।
ओ जाडे की धूप रसीली ॥

मन उछले तालो के गोते
सकोची घट देह डुबोते

अधरो पर पपडी पडती है, प्यास अनिश्चित है नकली है
बूंद बूंद पर जाल बिछे हैं पानी मे बदी मछली है

ओ तट के सिन्दूरी हेला
भीड बहुत व्यक्तित्व अकेला

गुन दे लहर लहर की सांसें
जन्मे नये सिरे से प्यासें

तिरने लगे कामना उजली,

गोताखोरो की मुट्ठी मे माटी के सपने उजला दे ।

ओ शरमीली, मुखर, हठीली ।
ओ जाडे की धूप रसीली ॥

आओ नरम दूब पर डोलें
सगत का क्षण पर्तें खोलें

सहलायें ठिठुरे गमले को, खडी फसल की सुने कहानी
पाले का सदर्भ नही दे सूर्यमुखो बिरवा अभिमानी

ओ कुनकुने प्रहर वरदानी
सर्द न हो नस नस का पानी

गहे न उर तस्वीरें खण्डित
रहे न नेह–टेर अब कुण्ठित

सीले सृष्टि चीर ना धानी

मुडलें टूटे हुए रास्ते जुडने की मजिल बतला दे।

ओ शरमीली मुखर हठीली।
मो जाडे की धूप रसीली॥

•

गंध दिवस

गध दिवस छवियो के आँगन मे डोल रहे।

लतरो पर लिपट चढी
 महुआयी निश्वासें
पातो से उभर चुभी
 आँखो की दो फाँसें

होठ फिर गुलाबो के कँप कँप कर बोल रहे।
गध दिवस छवियो के आँगन मे डोल रहे।।

खम्भो से धूप उतर
वातो मे उलझ गई
छज्जो के टोडो सी
शरमाहट सुलझ गई

खिडकी को मन चाहे सदेसे तोल रहे।
गध दिवस छवियो के आँगन मे डोल रहे॥

मदिर के घटो सी
अनुगूँजें लौट पडी
मुदरी के बदले मे
घर आई कनक छडी

साधो को तखरी मे सपने भर तोल रहे।
गध दिवस छवियो के आँगन मे डोल रहे॥

गीतों का क्षण

हरसिंगार तले निंदियाया
पाटल की गोदी झुलराया
कुंज मालती गंध नहाया
नित सपनाया
नित गुन्जाया
यह गीतों का क्षण।

बादल प्यास अँगारो के दिन
ठडी जलती राहे
सुधियायी अगूर उगाती
वे करील की छांहे

टीले पर दो ढाक फूलते
नीम तले दोपहर झूलते
नित कागा बोली मुडगेली
कुहनी कसती उम्र सहेली

रेत जडे वे चरण ज्वार के
लीपे आँगन, रची अल्पना
निर्झर सा सगीत देह मे
नखरो के नज़दीक कल्पना

मीठी रितुयें, नर्म हवायें,

शहद चाँदनी, ओक लगाया
खिले गुलाबो का सहलाया
चला शिरीषो का उकसाया

तन उतराया
उर गहराया
यह गीतो का क्षण।

अब प्रबुद्धता, तर्क, असगति,
चहरे, शीत लडाई
उपल, बवडर बीच अमापित
कवि की यह तरुणाई

पके आम सक्रान्ति काल के
भूखे क्षण दो रोट छाल के
घृणा उगाये बीज धान के
छलते सपने चद्रयान के

पर आफ्त के बीच आस्था
जोने की तैयारी मेरी
कटा-छटा टूटा ऐकाकी
मन मिट्टी को यारो हेरी

भूल अनिश्चय, धुंआ, घुटन यह

डाले बीच उमस अँसुआया
दूध भरी बालो मे गाया
फिर कल की तस्वीर जडाया
मुग्ध डुलाया
नित लहराया
यह गीतो का क्षण।

कल टूटेंगे किले शब्द के
हेला मुक्त बहेगा
गीतित सहज सरल जितना भी
वातावरण रहेगा

मन के टोहे अर्थ खिलेंगे
जिये हुए आकाश मिलेंगे
धरती नक्षत्रो की होगी
सारी सृष्टि मिलेगी भोगी

बैठ घड़ी दो घड़ी थके हम
सुख दुख बाँट चलेंगे अपने
एक रोज़ साकार करेंगे
अब तक कहे गये जो सपने

अलगावों में सेतु बाँधता

कर कंगन पहनाता धाया
दो डोरों के छोर समाया
सदन सघन डोला महकाया

नित पुलकाया
नित गदराया
यह गीतों का क्षण।

●

सन्ध्या चरवाहो की

देखो लौट रही है रीती फिर सध्या चरवाहो की।

काग भगोडो के बाँसो पर
लटका सा यह नभ बेचारा
पूछ रहा आकाशदीप से
सहम सहम सदर्भ हमारा

कट कट गिरी पतगें छत पर, हारे पेच, अस्त है हस्ती
टेर रही सुधि, तूफानो मे जैसे गति मल्लाहो की।
देखो लौट रही है रीती फिर सध्या चरवाहो की।।

माथे पर बेचैन लकीरें
उचटा चित्त, बुझा सा मन है
वातावरण अनमना जैसे
सुलग रहा चदन का वन है

जैसे अजगर की कुण्डलि मे विवश पडी हो हिरनी कोई
डूब रही अनकही कहानी इन सुरमई निगाहो की।
देखो लौट रही है रीती फिर सध्या चरवाहो की॥

उर मे क्षुब्ध हजारो शतदल
तन पर कुन्द चम्पई कचन
कहा किसी ने मुझे प्रीत मे
'देह सभी की गोपीचन्दन'

लिपट रही सेवाल बदन पर, मैं विरक्त हूँ, तट सम्मोहित
ओ स्तमित लहर बतादे अब तो थाह अथाहो की।
देखो लौट रही है रीती फिर सध्या चरवाहो की॥

•

राह की ठंडी बयारो

ठहर कर दो बात कर लो राह की ठंडी बयारो ।

गाँठ जो बांधी महक तुमने किसी की
चाह हो संभव मुझे अब तक उसी की

मुक्ति हो मेरी नकाबों से तनिक घूंघट उघारो ।
ठहर कर दो बात कर लो राह की ठंडी बयारो ॥

लो कटेरी फूल कर पीली हुई है
अब तपन की दृष्टि कुछ गीली हुई है

उमरिया पक जाय जामुन की जरा ऐसे सिंगारो।
ठहर कर दो बात करलो राह की ठडी बयारो॥

आज तक इस पथ बस अनुगूंज आई
मोड पर ठहरी कथाओ की बिबाई

वचन के बन्धन खुले, तुम प्यार से फिर फिर पुकारो।
ठहर कर दो बात करलो राह की ठडी बयारो॥



अभी अभी बरसात थमी है

अभी अभी बरसात थमी है,
अभी अभी बादल उघरा है,
गीला गगन अभी टुक सोया,
ठहरो, अधिक न छेड़ो सुधियो, ४
कोंपल की भीगी पलकों का सपना मोती

अभी चीरती हुई गई है हवा कमल की पखुड़ियों को
पलभर पहले अलग किया है नागों ने फण से मणियों को
चम्पा के चहरे पर अंकित अभी तलक कोई सिसकारी
मैं शंकित हूँ, मुझे न पूछो, है किसकी सारी फुलवारी

अभी अभी अनहोनी धाई
बिगड़ी बात कहाँ बन पाई

अभी न बोलो, राज न खोलो, तुम अशोक से मंजरियों के,
ठहरो, मलयज की छननी में भोर सिंदूरी छन जाने दो।
कोपल की गीली पलको का सपना मोती बन जाने दो॥

टोह लगाता हुआ किसी की अभी पपीहे का स्वर भूला
अब तक झोटा आप ले रहा पड़ा नीम पर सूना झूला
झाऊ के झुरमुट मे अब तक प्रेत अँधेरा डोल रहा है
टूटे हुए सितारों का दम नजर नजर मे तोल रहा है

उमड़ रहे अब भी नद-नाले
भरे भरे हैं उर के छाले

खाकर चोट अभी फिसला है स्याह सगमूसा से निर्झर
ठहरो, जख्म न परखो मन के सारी उमस उफन जाने दो।
कोपल की गीली पलको का सपना मोती बन जाने दो॥

अभी पलटकर प्रश्न गूँजते, प्रतिध्वनि का निर्णय बाकी है
महासिन्धु से उछल मीन ने खुद अपनी सीमा आँकी है
अभी अनागत की मुरली ने छुआ अंकुरों के अधरों को
पहली बार चुनौती दी है मेरी माटी ने अमरों को

अभी दर्द कुछ कुछ गाया है
भीतर तपसी जग आया है

अभी अल्पना के मुकुरों पर यायावर के चिन्ह शेष हैं,
लो चुटकी भर चून बिखर लो लेकिन नहीं वचन जाने दो।
कोपल की गीली पलकों का सपना मोती बन जाने दो॥

•

उम्रः परिवेश

सुबह

सुबह फेंकती पाँसा ।
फिर सुलझा मन फाँसा ।।

अधडूबी बतखों सा जल की थाहें पूछ रहा
लहर चूमती हुई किरन के मन का मोह गहा
कमल पात पर टिकी बूंद सी—
बाँधी उम्र दिलासा।
फिर सुलझा मन फाँसा।।
सुबह फेंकती पाँसा।।

पीले मोर उधर सरसों के पंख पसार गये
मेड़ों पर रुक पवन झकोरे फिर कुछ हार गये
फिर तन व्यापी छुअन गुनगुनी
फिर भटका मैं प्यासा।
सुबह फेंकती पाँसा।।
फिर सुलझा मन फाँसा।।

धूप : यात्रा

मेंहदी के मूडो पर आकर
बैठी चढती धूप।

सुधि भिडते अरने भैंसो की
सरकडे तन घिसते
पगडण्डी दो गाँव बीच मे
मेलजोल के रिस्ते
कण्डे थापी हुई दिवारें
सडक बडी फिर नगरी
फाइल दौड, बुझाई आँखें
यन्त्र सभ्यता बहरी

सिमिट गया मैदान छोडकर
गुलदस्तो मे रूप।
मेंहदी के मूडो पर आकर
बैठी चढती धूप॥

आकाश

धोबी के 'आइरन' जैसा—
गर्म नुकीला दिन का आकाश।

मन का तनाव बढ़ाने के लिए
तन की सलवटें मिटाता है
असगतियो को जीने के लिए
तचती सड़कों पर लाता है

यह हर मोड़ हर मंज़िल पर
बिखेरता है किस्मत के ताश।
धोबी के 'आइरन' जैसा
गर्म नुकीला दिन का आकाश॥

यह दैत्य-उदर के भीतरी—
भाग जैसा रात का आकाश।

नभ गंगा की अंतड़ियों से हमे
मथकर मजे से पचाता है
निढाल देहों को तम के घोल मे
डाल रोज रसायन बनाता है

छूंछों को फेंक देता है
सुई चढ़ाने या चरने घास।
यह दैत्य-उदर के भीतरी
भाग जैसा रात का आकाश॥

प्रतीक्षा

छन शिरीष से आती होगी,
कोई गंध बयार।
खोल दिये हैं द्वार॥

दूर खजूरों मे सूरज ने
रथ ठहराया होगा
निकल गाँव से एक चन्द्रमा
पथ पर आया होगा

नयन किसी के लाते होंगे,
भर भर कर कचनार।
खोल दिये हैं द्वार॥

धुले जा रहे रंग भड़कते
कागज के फूलों के
पल्ले उड़े महकते होंगे
लहर ढके कूलों के

बाँटे होंगे कही किसी ने,
रितु को नये खुमार।
खोल दिये हैं द्वार॥

•

नया पौधा : आगन्तुक

यह नया पौधा जिया है।
कोंपलों को साँस लेने दो
टहनियों से झाँक लेने दो
देख लेने दो इसे, इस
सृष्टि ने क्या क्या दिया है।
यह नया पौधा जिया है।।

चहचहों को गुनगुनाने दो
अचरजों को कुनमुनाने दो
माँग लेने दो इसे, वह
कर्ज जो सबने लिया है।
यह नया पौधा जिया है।।

टिक जड़ों को फैल लेने दो
आस्था को गैल लेने दो
लदलदाये मौसमों का
भोर इसने ही दिया है।
यह नया पौधा जिया है।।

पटाक्षेप

आई लौट बहार ।
दर्पण बिन शृंगार ।।

कली खिली पर गध न आई
मैना मूक मूक मुस्काई
टूक टूक कोयल कुछ कूकी
गाती भ्रग भीर तक चूकी

छले छले से मृग मचले है
जाने क्यो मन मार ।
आई लौट बहार ।।

तुतलायी अब नही तरगें
हवा भरी सी सभी उमगें
चदा उगा चाँदनी जुलहन
बुने न मलमल उघरे तन मन

या तो बदली दृष्टि हमारी
या बदला ससार ।
आई लौट बहार ।।

फागुन की प्रीत

फागुन की प्रीत प्राण ! नया रग लायेगी ।

गुन्चो पर झूल रहे,
खिल खिल सुध भूल रहे, मुग्ध दिन परागो के
अमुआ तल अडे अडे,
चाहो को घेर खडे, रसिक गीत फागो के

बैंननि उरझायेगी, सैंननि सुरझायेगी
बांहो मे धूप-छाँह मुकर मुकर जायेगी

पलभर की छेडछाड बरस भर सतायेगी ।
फागुन की प्रीत प्राण ! नया रग लायेगी ।।

वासन्ती तरुणाई,
पुरवा सी अँगड़ाई, उमर अमलतासों की
चैन नहीं ख्वावों को,
छेड़ती गुलाबों को, दहक उर पलासों की

प्यास ना अघायेगी, मोरपंखा लायेगी
कान्हा की अधर धरी बाँसुरी छुआयेगी

अँखियन की पँखियन पर तैर तैर आयेगी।
फागुन की प्रीत प्राण! नया रंग लायेगी॥

मौसम चितचोर यहाँ,
जायें कित ओर कहाँ, मीठे क्षण छलते हैं
सपनायीं पगथलियाँ,
नैनन की अजुलियाँ, भर भर दिन ढलते हैं

पोरों पर आयेगी, संतति तक धायेगी
पंथ के गुलालों में गंध घुमड़ जायेगी

देहों के दर्शन की महिमा महकायेगी।
फागुन की प्रीत प्राण! नया रंग लायेगी॥

पंथी रे पग थाम

जल तज ग्राह पार पर आये
लम्बे बहुत होगये साये

पथी रे पग थाम।
हो आई है शाम॥

निगल गयी दूरी सूरज को
लुटी पडोसिन रगत
छाया बनकर दौड गयी है
कोई उजली सगत
खंड खड आकार होगये
किन्तु कही तिल ताड होगये
उगा अकेला तारा नभ को
करता विवश प्रणाम।
पथी रे पग थाम॥

रेला समा गया गलियो मे
दे सडको को झाँसा
बाजा फूटा ढोल कहो पर
कही टूट कर काँसा
आगे चली कहानी कोई
पीछे रही निशानी कोई
हारी भीड, ऊबती शक्लें
मिटे लिखे कुछ नाम ।
पथी रे पग थाम ।।

सूखा घाव खचलता कोई
कही बिंधा मन रोया
चौखा सदन अकेला कोई
निर्णयहीन भिगोया
बही नही वे मुग्ध बयारें
जो घूँघट चुपचाप उघारें
लिखी रह गयी इन होठो पर
उन होठो की घाम ।
पथी रे पग थाम ।।
हो आई है शाम ।।

•

राह यह काँसे कडूलों की

शाख से रिस्ता सुमन जब जोड लेते हैं
हडबडा दो चार पत्ते मोढ देते हैं
मन थका तो साँस ली काँसे कडूलो मे
सुधि पढी पगडडियो तक दौड लेते हैं

रसमयी चितवन

खिला जलजात आती है अभी भी रसमयी चितवन
उमर भर की कहानी है तुम्हारे साथ बीता क्षण

पड़ी तस्वीर धुंधली है बने सब बिम्ब टूटे हैं
मगर अपवाद अब भी है तुम्हारा एक कचन मन

न कोई शिल्प मे उतरी न अब तक गीत मे ठहरी
लजाकर जो हुई मुखरित तुम्हारे होठ की कपन

बहारें जिद् करती हैं मगर सदर्भ कैसे दूं
कहाँ 'शो केस' यह चुभते कहाँ उन्मुक्त भोलापन

कभी मझधार पर देखा कभी ठहरे किनारे पर
सकल ससार मे देखा हजारों बार वह दर्पण

बदलती अल्पनाए नित न बदले स्वप्न के दर्शन
तुम्हारो गांठ जो बांधे न खोले जा सके वे प्रण

अकिंचन प्रीत ना होती जनमते फिर नही बिरवे
न होती सृष्टि अमृत की न होते प्यास के कण कण

चाँदनी की रात

फलांगी है दिवारों से अभी यह चाँदनी की रात
निकलकर मांद से आई शिकारिन बाघनी सी रात

किसी की आह ले आई किसी को दाह दे आई
बिखरती कोढ़ सी भू पर सघन पेड़ों छनी सी रात

लहर की नींद खोती है हृदय मे याद बोती है
बिना सोचे चली आई तनावों की तनी सी रात

निसाचर सी टहलती है अँधेरे से बहलती है
डराती है अकेले में जकड़ती करधनी सी रात

कभी यह कांस पर गाती कभी यह फाँस पैनाती
मड़ैयों से महल तक अब खड़ी है यह ठनी सी रात

धतूरों मे इधर फूली बबूलों में उधर भूली
किसी षड़यन्त्र को रचती गुजरती सनसनी सी रात

अकिंचन रूठना किनका फिज़ाओं को बदलता है
मनाये से नहीं मननी अजब यह अनमनी सी रात

जख्म मिट्टी के फिर उभर आये

वो फिर हमारे सामने आये
एक गम हजार आइने लाये

फिर अनमने हैं फूल जूडे के
फिर अगुलियो ने स्वप्न महकाये

नज़र मिलते ही आप झुकती है
अर्थ दर्शन का कौन समझाये

याद आती है कुछ उडानें यू
पास मरुथल हो हस थक जाये

नीड बुनना ही ज्यो बया भूले
पीर इतनी है किस तरह गाये

देह प्यासी है रूह आकुल है
जिन्दगी क्या है कौन सुलझाये

गम अकिंचन का उन्हे समझा दो
जख्म मिट्टी के फिर उभर आये

•

घटाएं आज सावन की

घुमड़ने लग गयीं नभ मे घटाएं आज सावन की
अगाया दर्द गुनती है अकेली याद आंगन की

लगी है तीर सी चलने अनिश्चय की हवा पछुवा
तपस्या टूटती, उड़ती कुशाए आज आसन की

अचानक सिसकियाँ भरता करीलों का कटीला मन
बतादो दूर कितनी है घड़ी वह प्राण आवन की

गुंथे जाते है आपस मे बदलते रूप बादल के
गई यूँ कौंधती बिजली उठे ज्यो टीस गाँगन की

बरस कर छुन छुनाती हैं तवे सी झील पर बूंदें
अपरिचित राह पर लथपथ भटकती पीर पाँयन की

उछलती सदियाँ शाखें परखते चेतना तरुवर
लगी है सुन्न करने अब यहाँ सवेदना क्षण को

तुम्हारे संग से छूटे हुए इतने अकिंचन हम
कि जैसे जगलो मे भटक जाये उम्र बचपन की

•

बैंगनी आँचल तुम्हारा

झूलता मुड़गेलियों पर बैंगनी आँचल तुम्हारा
घूमता सूनी छतों पर गुदगुदाता सा इशारा

धुँधलके केश खोले हैं दिशाएं होश खोती हैं
तुम्हारी मुस्कराहट छेड बैठी आज इकतारा

अटक कर फिर नहीं झपकी, न डोली है नजर खोई
किन्हीं अनहोनियों को नीम झुक झुक दे रहा झारा

अपरिचय का अनिश्चय का अँदेसा मिट रहा ऐसे
कि जैसे निर्झरों से जन्म लेती हो नई धारा

सुबह से शाम तक की भीड़ में हो इस तरह से तुम
बस्तियों के छोर पर ज्यों जगमगाता हो सितारा

हजारों उलझनों में झाँक कर ऐसा लगा मुझको
जिन्दगी मेरी अकिंचन अर्थ पर तुमने उभारा

•

किनारे सब नहीं मिलते

सभी कलियाँ नही खिलती किरण के गुनगुनाने से
किनारे सब नही मिलते तरी को तीर लाने से
किन्ही गहराइयो से लौटते हैं दर्द बन गाये
सभी बन्धन नही खुलते उमर भर कसमसाने से
समय को गीत मे ढलना पडा है सूर्य देने को
नही नित भागवत रचती किसी के बहक जाने से
किसी की प्रीत मे रमना इबादत के बराबर है
सभी सपने नही मिलते सकल ससार पाने से
कभी मन बिजलियो मे है कभी है इन्द्रधनुषो मे
उमस सारी नही जाती यहाँ मल्हार गाने से
कटे बेहोशियो मे ही मगर वे दिन हमारे थे
नही सब रास्ते मिलते सभी को होश आने से
अकिंचन नाम देकर भी किसी ने होशियारी की
नही आकाश सब ढकता लतायें अधिक छाने से

•

राह यह काँसे कडूलो की

थके मन साँस ले ले राह यह काँसे कडूलो की
सडक मैं छोड आया हूँ अपगो और लूलो की

झोपडी किलकारियो को, है आँधियो के रुख दिया
पलक मे रोशनी भरलो बुझो नजरो तिलूलो की

नकाबो मे नही चहरे, न नकली मुस्कराहट ही
जुन्हाई खडी फसलो मे इधर उधरे दुकूलो की

विषैली प्यास का जादू नशीली आँख का धोखा
गई सब देह की माया लिपटती महक धूलो की

जख्म सीकर गिलोलो के हवा यूँ गुनगुनाती है
हकीकत मे बदल जाये इबारत ज्यो उसूलो की

धसी हैं फाल की धारें रुकी हैं काल की मारें
हुई हैं भोथरी नोकें यही घिस घिस बबूलो की

सयाना बहुत भोलापन लगा उनका जिन्होने भी
अकिंचन नाम दे डाला, लिखी है उमर भूलो की

•

किस किनारे बह चलें

काटती अँगुली मशीनें, मुस्कराती हलचलें
रास्ते सब खो गये हैं मिल रही हैं दलदलें
सुलगता है आदमी अब राख उम्मीदें लिए
दौडती छोटाकशी को चीथडो तक दमकलें
दायरो मे दायरो की कसमसाहट देखिये
तोडते ही हाथ पडती फिर नई कुछ सकलें
आग ठडी, बर्फ धधकी, किस तजरबे को जियें
व्यर्थ हैं समझे तरीके काम आती अटकलें
अब विवादो की प्रमादी किश्तियाँ ढोने लगी
किस भँवर मे डूब जायें किस किनारे बह चलें
नफरतो नस्ल हम सब युद्ध के मारे हुए
बाँसुरी ले ढूँढते हैं आफतो की मंजिलें
इस अकिंचन जिन्दगी का अर्थ पाने के लिए
प्राण ! थोडी दूर तक अब गुनगुनाते हम चलें

●

बड़े तड़के चली आई

बड़े तडके चली आई तुम्हारी द्वार तक डोली
कमल के कान भरती है किरण की कुनकुनी बोली
कहाँ सतोष का पहरा अभी मन ओस सा बिखरा
अधेरा सब नही आंजो सलोनी आँख जो भोली
अभी पुरवाईयो ने एक दो अँगडाईयाँ ली है
कहाँ अनजान सौदे ने सभी तनहाईयाँ तोली
चरण की रेशमी आहट जरा तुम पास तो आओ
परागो ने रहस्यो की अभी तो खिडकियाँ खोली
कथा के शीर्षको से तृप्ति का अन्दाज कैसे हो
अभी बाजार खुलने दो अभी है प्यास अनमोली
रहे कुछ और थामो मे सभी अँगूर मीठे हो
अनारो मे अभी बचपन खडा है चूंसता गोली
सदन तो भर गया लेकिन अकिंचन पौर है सूनी
जरा विश्वास लौटें तो रखूं मैं माँग मे रोली

•

मुक्तक

प्यार

जब से तुम्हे निहारा मैं तो हुआ तुम्हारा
अब धार क्या करेगी क्या मौज, क्या किनारा
इन आँसुओ की कीमत क्या दे सकेगी दुनिया
अनमोल हो गया हूँ पा प्यार मैं तुम्हारा

दीवार

इन्सान के हृदय मे कुछ भूख प्यार की है
पर प्राण की कहानी कुछ जीत हार की है
इस पार जुडी महफिल उस पार खडे प्रीतम
ना जा सका किधर भी दुनिया दिवार सी है

रंग

जिस ठौर आँख लगली उस ठौर सो गया हूँ
जिसने मुझे पुकारा उस बाँह खो गया है
हर रग मन भिगोया हर रग चढ गया है
आखिर को होते होते मैं तुम सा हो गया हूँ

गाँव

बाइबल, कुरान, गीता सामान है सफ़र के
दो चार रास्ते हैं उस दूर के नगर के
चाहे इधर से जाओ चाहे उधर से जाओ
बस एक गाँव जाना आखिर को घूम फिरके

रूप

रूप क्या है बहम बहकी आँख का
या नशा है कुछ नशीली प्यास का
वासना से मन न तुम कलुषित करो
प्यार केवल खेल है विश्वास का

याद

मैं तो तुमको भूल चुका हूँ लेकिन भूली नही याद है
बिन पानी जीता है बिरवा जाने कैसी लगन साघ है
जाने वाला भी लौटेगा मन तो नहीं मानता लेकिन
दीपक से गोधूली कहती तुम लौटोगे निर्विवाद है

कविता

बचपन मुझे रुलाकर भागा–यौवन काँटों पर बीता है
सुख मेरा वनवासी भटकन दुख मेरा विरहिन सीता है
फिर भी मैंने राह बनाई गिरकर उठकर, उठकर चलकर
मैं क्या समझूं मर्म गद्य का कविता ही मेरी गीता है

बोली

हीरे मोती रहे देखते पर कौडी का दाम हो गया
अर्जी पर मर्जी थी किसकी कोरे खत का काम गया
फाइल पर तो अंक बहुत थे जोड जोड कर हारा लेकिन
तुमने ऐसी 'बोली' बोली जनम जनम नीलाम हो गया

पहचान

जब आस्था अनबूझ लगता है समर्पित हूँ
मैं समय की धार पर सहसा विसर्जित हूँ
इससे बडा क्या और दुख होगा मुझे
पहचानते हो तुम मुझे फिर भी अपरिचित हूँ

इन्सान

सोचता हूँ कब ढलेगा दिन बुझे दिनमान का
खून कब बल लायेगा मजदूर का खलिहान का
नित सपन की पालकी को लादकर चलते हुए
रोटियो से होगया है बोझ कम इन्सान का

गीत : याद

गीत क्या है भाव मय तूफान है
दर्द उसमे तैरता जलयान है
याद क्या है बस फटी तस्वीर है
जोडने मे व्यस्त हर इन्सान है

पंथ धूल का निर्मल दर्पण

जिन्दगी की हलचलें कुम्हलायेंगी
मौन की खामोश नजरें खायेंगी
धूल को मत धूल तुम कहना कभी
सुन लिया तो आँधियाँ चल जायेंगी

पंथ धूल का निर्मल दर्पण

हर ठोकर ने मुझे गिराया सदा भुलाती रही दिशाएं—
पर घबराकर कभी किसी से
मैंने मानी हार नही है।
क्योंकि जिन्दगी बहती धारा
कोई टूटा तार नही है॥

चिन्ताओ से जली दुपहरो, शकाओ से घिरा गगन है
माना लू की गोद अँगारे भर कर चलता तेज पवन है
भौतिक भूख मरोडें लेती, पतित कामना प्यास जगी है
सस्कृतियो के गोरे तन पर लिप्साओ की आँख लगी है

हरियाली के प्राण बेधकर, जी सकता है पतझर तब तक
जब तक नई बहार नवेली
कर लेती शृगार नही है।
क्योकि जिन्दगी बहती धारा
कोई टूटा तार नही है॥

दिन के सपन देख सुख पाते देखे कई हारने वाले
लेकिन कितनी देर ठहरते सूरज पर बादल के जाले
हर उपलब्धि जनमती जिस दिन, मिटता है बेनाम पसीना
जाने कितनी बार तराशा जाता है दमदार नगीना

झूठो अँधेरे चाहे खीचो सूनेपन की लक्ष्मण रेखा
फिर भी रश्मि राह का तुझ से
रुक सकता विस्तार नही है।
क्योकि जिन्दगी बहती धारा
कोई टूटा तार नही है॥

कुछ ऐसे भी आँसू जिनका होता दर्द अजाना गहरा
इसी अपरिचित निधि के ऊपर देता है अवचेतन पहरा
जिन्हे कल्पना सेती रहती हारे विश्वासो के आँगन
रचकर कला निकलती बाहर जैसे अगडाता हो सावन

घुटती हुई श्वास को मैंने यह आवाज़ लगाते पाया
नश्वर हर रसबोध यहां का
नश्वर लेकिन प्यार नहो है।
क्योंकि ज़िन्दगी बहती धारा
कोई टूटा तार नहो है॥

बहुत ध्यान से देखा मैंने पथ धूल का निर्मल दर्पण—
जिस पर मेरी देह कर चुकी अनगिन अनुकृतियो को अर्पण
कहीं स्वरों का नृत्य सो रहा, कही गीत का बेसुध मेला
बहुत देर तक रहा भटकता विस्मृतियो के बीच अकेला

सचमुच कोई तोड़ चुका है कितने दिलकश उम्र खिलौने
पर मेरा अस्तित्व आज भी
मिटता यह संसार नही है।
क्योकि ज़िन्दगी बहती धारा
कोई टूटा तार नही है॥

यह जगने की वेला है

हारो नही जूझने वालो यह जगने की वेला है।
धानी धरती के आँगन मे लगने वाला मेला है॥

माना बहुत अँधेरा, फिर भी उगता सूरज अपना है
उडो गन्ध के सग चमन का जिसको मालुम सपना है
उधर देखना उदयाचल पर मौलसिरो की आँखें है
इधर सरोवर और गगन के बीच हस की पाँखें हैं

तट को दूर समझने वालो लहर लहर पर हेला है।
धानी धरती के आँगन मे लगने वाला मेला है॥

तने जा रहे अँखुए-अंकुर, भूख-प्यास से लडने को
श्रम की सच्ची बूंद धरा पर चली सितारे जडने को
आँसू मोती बनने को है, दर्द घुटा अब गायेगा
यह चिपजीवी समय अमरता अपनी लेकर आयेगा

छूने को सगीत भीड मे जो भी निपट अकेला है।
धानी धरती के आँगन म लगने वाला मेला है॥

उमड रहा मकरद, पकडने उडे फूंकने तितली के
बादल घेरा डाल देखते जादू मीठी कजली के
मुरकी खाती बढती बेलें करतब उठते बाँसो मे
उमस रही है अमृत रितुयें चुभने वाली फाँसो मे

मेरे देश! अकाल ओढता हरियाली का सेला है।
धानी धरती के आँगन म लगने वाला मेला है।

ऐसा मेरा ग्राम है

देखो दूर पार नदिया के,
ऐसा मेरा ग्राम है ।।

वहाँ राम की सीता रहती
राधा गीत सुनाती है
बहन दुलारी राखी रोली
नेह डोर ले आती है

मनवाला मनचला वहाँ का अपने घर का राजा है
वहाँ न कोई कर्जा, शोषण, होता नहीं तकाजा है

वहाँ वहारें, प्रीत पुकारें,
गली गली सुखघाम है।
ऐसा मेरा ग्राम है॥

वहाँ न मद वैभव का बसता
वहाँ न उदजन की गरमी
वहाँ न फैला जहर भेद का
शीतयुद्ध, ना हठधरमी

वहाँ न चन्दा तक जाने की तैयारी की जाती है
अलसाती, अँगडाती, गाती स्वय चाँदनी आती है

धर्म जिलाने जीने वाला
कर्म वहाँ निष्काम है।
ऐसा मेरा ग्राम है॥

मुक्तवास है, मुक्त विचरना
नही विचारो का वन्धन
आजादी तो नही पहनती
कभी गुलामी का कगन

आदर्शों की छाया गहरी दर्शन वहाँ यथार्थ है
मिलजुल होते काम वहाँ के सुख दुख सब परमार्थ है

करते सभी परिश्रम जी भर
तब मिलता आराम है।
ऐसा मेरा ग्राम है॥

खलिहानों ने काव्य दिया है
स्वर सरगम हरियालो ने
हस्ती, यह सब मेरी मस्ती
दी मुझ को वनमाली ने

भरती वहाँ गली जब हलचल जब होती पनघट रुनझुन
सहसा मुझे प्रेरणा मिलती जब करता चरखा गुन्जन

वहाँ आयु से मौत हारती
जोवन सो संग्राम है।
ऐसा मेरा ग्राम है॥

•

सपन समाधी तोड़ो

समाधान मत मांगो पढ़लो मन पर मन की लिखी कथा,
क्योंकि आज के उत्तर कल फिर प्रश्न चिन्ह कहलायेंगे ।
उलझ रहे जब तथ्य तर्क मे
हृदय कहे उसको मानो
इस धरती से अधिक सुहावन
आसमान को मत जानो

प्यासे हो, बादल मत हेरो
यहां पास ही है पानी
जहां उजाला सुलभ, दिये की
करो न इतनी निगरानी

सपन समाधी तोडो अब तो जगा रही है सुबह नई
यदि अलसाते रहे खून के दौर जमे रह जायेंगे ।।

कल्पित कुछ भी नही, दूर तक
जो भी हमको दिखता है
आने वाले दिन का लेखा
सिर्फ पसीना लिखता है

दुख तकदीर नही है अपनी
सुख ससार नही अपना
सभी दूरियाँ गले मिल सकें
युग का एक यही सपना

दिया सिराओ नही, कूदकर धाराओ मे आन मिलो,
कितने दिन विश्वास कूल पर खड़े खड़े बहलायेंगे ।।

यह सक्रान्ति काल है, इसके
सत्य सुनिश्चित नही अभी
किन्तु भटक कर प्रीत रीत की
कर लेते है बात सभी

रहे न सीमित पहचानो तक
बैठ कही कुछ स्वीकारे
ओ मृत्युजय घड़ी, विषमता
अब तो दावो पर हारें

कहाँ दहक है, लगी महकने उठी हवायें मौसम की
कब तक सभ्रम बिन घावो की पीड़ा को सहलायेंगे ।।

•

एक रंग हो जाना है

डूब डूब कर रग रग मे
एक रग हो जाना है।
सारा दृगभ्रम मिटे, मुझे अब
वह विश्वास जगाना है।।

बैर नही मुझको स्याही से प्रीत नही है केशर से
काले गोरे सब रगों को गाने दो हिलमिल स्वर से
कढ जाने दो तन चीरो पर रग रँगीली तस्वीरें
सकोचो मे कैद रहेगी कब तक अपनी तकदीरे

हर गुलाल है धूल धरा की
सबको अग रमाना है।
डूब डूब कर रग रग मे
एक रग हो जाना है।।

तिरती हैं कितनी आकृतियाँ एक उमडते बादल पर
उभरा करते सपन अनेको अँजे एक ही काजल पर
बिरवा एक मगर शाखो पर फूल अनेको खिलते हैं
चलें किसी भी राह यहाँ हम एक जगह आ मिलते है ।।

जुड जुड सारी रेखाओ का
एक चित्र कहलाना है।
डूब डूब कर रग रग मे
एक रग हो जाना है।।

कही उदासी अधकार है कही खुशी उजियारा है
है आराम कही अलसाया कही परिश्रम हारा है
दीख रही दीवार जहाँ भी, वह अब ढहने वाली है
अगले दिन के साथ पुरानी बात न रहने वाली है

आखिरकार हमे हर नैया
तट पर कही लगाना है।
डूब डूब कर रग रग मे
एक रग हो जाना है।।

घृणा करूँ फिर घृणा सहूँ मैं जहर न ऐसा पीना है
सग बिना क्या चलना पथ मे, प्रीत बिना क्या जीना है
जो दिन कटता पगा प्रीत मे उसे भला दिन कहते हैं
उनका सबसे बडा भाग्य है जो बाहो मे रहते हैं

मैं गागर हूँ मुझे सभी की
उर में प्यास समाना है।
डूब डूब कर रंग रंग में
एक रंग हो जाना है।।

भागीदार सभी के दुख में, सबके सुख का साक्षी हूँ
विद्रोही हूँ मैं विघटन में, आदत से अनुरागी हूँ
सहमति, सुलह, चाह से हटकर, अलग न मेरा डेरा है
जैसा तुम्हें लग रहा वैसा, मेरा साँझ सवेरा है

विविध स्वरों को गाते गाते
एक गीत गुन जाना है।
डूब डूब कर रंग रंग में
एक रंग हो जाना है।।

०

पाँव पाँव पर मिली प्रेरणा

पाँव पाँव पर मिली प्रेरणा
ठाँव ठाँव पर गीत मुझे ।
गूँजी राह मञ्जिलें जिनसे
संग मिले वे मीत मुझे ॥

बाँहें मिली, सपन के झूले
छोटी बड़ी पुकारों में
जिस माटी की देह बनी है
गायी कौंण कगारों में

लहरी अगर भूल तो, पट ने गढ़ी नई नित तस्वीरें
किसी प्रीत ने सहज हटादी दृष्टि भटकती प्राचीरें

मन भावन संबंध लगे सब
झरे सभी पुनीत मुझे ।
पाँव पाँव पर मिली प्रेरणा
ठाँव ठाँव पर गीत मुझे ॥

सबसे नाता नेह प्रेम का
काम सभी से पड़ता है
अगर भावना रहे संकुचित
तो कहलाती जड़ता है

ठुकराई इस गहन गर्द में लाखों मणियाँ सोती हैं
जाने किन सीपों के भीतर जाने कैसे मोती हैं

जिनका भी कर लिया भरोसा
वे ही लगे प्रतीत मुझे ।
पाँव पाँव पर मिली प्रेरणा
ठाँव ठाँव पर गीत मुझे ॥

कहते हैं सुख दुख के साँचे,
सभी आदमी ढलते हैं
फूल शूल मिलते निश्चय ही
पथ में जो भी चलते हैं

पर्वत खाई, ऊँचे नीचे, चढ़ना और उतरना है
सम्भव है ठोकर लग जाये सम्हल सम्हल कर चलना है

मिली नाव जो लगी स्वय तट
हर तूफान विनीत मुझे ।
पाँव पाँव पर मिली प्रेरणा
ठाँव ठाँव पर गीत मुझे ॥

●

न जाने क्या होगा

अध कुओ मे उतर रही है
मरुथल मारी प्यास
यह धधका आकाश
न जाने क्या होगा।

खोट निबौरी ढेर लगाता
नित कौओ का शोर
लपट बाँध पखो मे फिरते
जगल जगल मोर

छप्पर छाये उड उड जाये
रचती आँधी रास।
पके आम तो पिया मिलेंगे
हियरा बडा उदास॥
न जाने क्या होगा।

सरवर सूखे मछरी माँगे
उड़न खटोला जाल
निरवंशी मत करो रामजो
फिर अहिहैं यहि ताल

बाबुल पाती नहीं पठाई
क्या सावन की आस।
झूला बोजना थकी बहुरिया
सासुल जागे सांस ॥
न जाने क्या होगा ॥

जैसी करनी वैसी भरनी
यह सतो के बोल
धीरे थपकी देहु ननद जी
फूट न जाये ढोल

इतने ऊँचे बोल न बोलो
मेड़ मेड पर बांस।
काँटा हो तो तुम्हे दिखाऊँ
रोम रोम मे फांस।
न जाने क्या होगा।

गीत बटोही

गुनगुन गुनगुन, मथर मथर, धीरे धीरे मुग्ध मगन।
गाता चल ओ गीत बटोही मिलें न जब तक धरा गगन॥

आँधी कोरा पृष्ठ खोलती लिखने युग के लेखे हैं
जितने तिनके उडे, नीड ने उतने सपने देखे है
गगा नये पसीने की अब तीरथ तीरथ लानी है
सूरज को मुट्ठी मे रखकर कहनी तुम्हे कहानी है

खडा पथ मे भाँप रहा है कबमे तेरी दिशा पवन।
गाता चल ओ गीत बटोही मिलें न जब तक धरा गगन॥

आँगन लीपो इस धरती का मिट्टी दुलहन बन जाये
पात पात पर रखदो मँहदी नई नवेली शरमाये
बाग बाग मे मधु की महफिल, अलि झूमे, कलियाँ फूले
घुंघरू बाँधो हर कोयल के डाल डाल पर जा झूले

ऐसी मुरली छेड सदन के हो सारे साकार सपन।
गाता चल ओ गीत बटोही मिलें न जब तक धरा गगन ॥

रोक सकी हैं तूफानो को कब जजीरें दीवारें
खडा किनारा रहता कब तक टकराती जब मझधार
मुश्किल है जब चले कुदाली बजर बीज न अँखुआये
मुश्किल है सावन का दृगजल कोई बादल पी जाये

देनदार है दानी रितुए जितनी उर मे बसी लगन।
गाता चल ओ गीत बटोही मिलें न जब तक धरा गगन ॥

करना है शृगार न केवल, अब परिधान बदलने है
जगी उम्र के चरण प्रीत की हर मजिल तक चलने है
अब मजहब मे नही, ईश को नये मनुज मे जीना है
जो अमृत की तृप्ति ओस से सीख रहा नित पीना है

कस्तूरी मृग सुलगे जिससे घर प्राणो मे वही अगन।
गाता चल ओ गीत बटोही मिलें न जब तक धरा गगन ॥

•

आरती की शाम है

आँधियाँ चलने लगी यह आरती की शाम है।
जो लिखा लिखकर मिटाया बाँसुरी का नाम है।।

कालिमा सचित, फटकता रोशनी को सूप है
पोटली बारूद की लेकर उतरती धूप है
धज्जियाँ होते परिन्दे, है सुरगे शाख पर
टूटकर कोई सितारा किरकिराया आँख पर

प्रार्थनाओ ! आग माँगो अब दहानों के लिए
छिड चुका वह भ्रस्था अस्तित्व का सग्राम है।
आँधियाँ चलने लगी यह आरती की शाम है।।

डाल वा सपना नही इतिहास का हर फूल है
सर कटे कटकर उगे दाता बडी यह धूल है
खून के छीटे मिले जब दूध की मनुहार पर
मैं सिरा आया कलम को बन सिपाही धार पर

वादियो के होठ पर चिटखे हुए बादल जमे
प्रश्न है, अनुगूंज किस किस दीप का पैगाम है।
जो लिखा लिखकर मिटाया बांसुरी का नाम है ।।

टिखटियो पर नाम कल जब शान्ति के राही पढे
वक्त की इस आत्मा को आइनो मे यूं गढें
'पीठ पर खाई न गोली पीठ पर मारी नही'
इसलिए इस देश की मिट्टी कभी हारी नही

पोखरो की प्यास जीता है धुंधलके का कमल
एक सेवाकुन्ज का था एक यह घनश्याम है।
आंधियां चलने लगी यह आरती की शाम है ।।

•

आरती की शाम है

आँधियाँ चलने लगी यह आरती
जो लिखा लिखकर मिटाया बाँसुर

कालिमा सचित, फटकता रोशनी को सू
पोटली बारूद की लेकर उतरती धू
धज्जियाँ होते परिन्दे, हैं सुरगें शाख
टूटकर कोई सितारा किरकिराया आँ

प्रार्थनाओ ! आग माँगो अ
छिड चुका वह अस्था अस्ति
आँधियाँ चलने लगी यह अ



केवल दर्द आचमन मेरा

सपन एक कितने साँचो मे ढला गया
कभी धूप मे कभी छाँह मे छला गया
विस्मृतियो ने रूप ले लिया होता पर
गीतो का क्षण दर्द खुरचता चला गया

केवल दर्द आचमन मेरा

सपन एक कितने साँचो मे ढला गया
कभी धूप मे कभी छाँह मे छला गया
विस्मृतियो ने रूप ले लिया होता पर
गीतो का क्षण दर्द खुरचता चला गया

तसवीर भूलता जाता हूँ

बदल गये अनगिन चहरे
रग रूप हल्के गहरे
बस याद रह गयी रेखायें, तसवीर भूलता जाता हूँ।

झोली भरकर अनपढ़ी लगन
प्राणो मे रचकर रिक्त गगन
किस ओर ले चली पगडडी
किस दिशा घुमाता मोड चला
मैं इस घायल बेहोशी मे
कितनी सीमायें तोड़ चला

बाँधा इतनी डोरो ने
उलझाया यो छोरो ने
रहगई गाँठ की घुटन याद, जज़ीर भूलता जाता हूँ।
तसवीर भूलता जाता हूँ॥

ऐसा जीवन जैसे शवनम
मिटने तक जिसे जलाता गम

कच्ची नीद सपन जहरीले
पथरीली सेज अमावो की
साधो का दूध लगा बचपन
गोदी मे गीले घावो की

दफनी इतनी इच्छायें
उफनी इतनी पीडायें
अदाज नोक बस काँटो की, हर पीर भूलता जाता हूँ।
तसवीर भूलता जाता हूँ॥

सब मोती बीधे हारो ने
लहरो को छला किनारो ने

बाडवज्वाला के देश बसे
सीपो की सूनी कोखो मे
प्रतिबिम्ब देख चन्दा भूला
सागर के ठगी झरोखो मे

नापी इतनी गहराई
भोगी मेरी परछाँई
समझौता करता ज्वार, किन्तु मैं तीर भूलता जाता हूँ।
तसवीर भूलता जाता हूँ॥

दुःख देखे हँसा नही जाता
ठोकर पर रुका नही जाता

मुरझाये सुर्ख गुलाब जहाँ
मैं अपना तन मन भूल गया
आँसू की दीर्घ कतारो मे
रसवन्ती चितवन भूल गया

इतनी पी ली है हाला
नस नस उबल रही ज्वाला
अनुमान स्वाद विष-अमृत का, तासीर भूलता जाता हूँ।
तसवीर भूलता जाता हूँ॥

•

हेला दे चला गया

उम्र की अटारी चढ हेला दे चला गया
एक वह तुम्हारा क्षण।
एक वह हमारा क्षण॥

प्यासे दिन शिखरो के झीलो मे डूब गये
आर पार चकरा कर नाविक मन ऊब गये
लहरों के रेतीले छन्द सब पडे रहे
जितने थे पास कभी उतने अब दूर बहे

बाँहों से बाँह गई
सिर पर से छाँह गई
गाने मे गीत गये
कहनी में बीत गये

पहचाने सौदे में रह रह कर छला गया
एक वह निहारा क्षण।
एक वह दुलारा क्षण ।।

रोज अब भभूड़ो सी याद घुमड़ आती है
माटी की मर्यादा टूट टूट जाती है
छूने को पोरो पर अगारे आते हैं
अनचाहे चित्रों के ढेर लगे जाते है

पाकर वह खोया है
जितना भर बोया है
दही सा बिलोया है
पल पल अन सोया है

पाने को हाथो पर रीता रख मला गया
एक उर उचारा क्षण।
एक नित पुकारा क्षण ।।

अँखियन मे अटके हैं बातो के कई द्वीप
पिघला कर देते हैं मोती को खुले सीप
आने को आता है पंछी घर हारा सा
मिलता पर नही उसे हेला वह प्यारा सा

रिक्तता अकेलापन
रंग बिन चितेरा मन
भीड़ो में भेद राज
सांचो मे काम काज

जीने को पाँतों मे वर्गों में ढला गया
एक देह धारा क्षण।
एक वह सिंगारा क्षण॥

तेरी दूरी मिटी न अब तक

अनुभव से परिचित लगते हो अनबूझे पहचान से ।
ओ अनदेखे चांद तुम्हे मैं क्या कहदूं अनुमान से ।।

शरद काल के बिखरे बादल, ज्यों बर्फीली चट्टानें
हार पिन्हाती क्यो हरसाती, यह कचन किरणें जानें
उडते ऊँचे नीचे पंछी नीलम गगन निराला है
तेरी दूरी मिटी न अब तक पी यादो की हाला है

तुम्हे पपीहा रटता रहता
गाती फिरती है कोयल

होठ हिला जलजात पूछते अलियो की गुन्जान से।
ओ अनदेखे चांद तुम्हे मैं क्या कहदूं अनुमान से॥

सँवरा करती सांझ सुहानी नित दुलहिन सी बनी हुई
किसकी राह दिया घर जाती छली हुई अनमनी हुई
रात लजाई सी दिखती है जैसे कोई आयेगा
सलमेवाला नभ का घूंघट जरा उघर सा जायेगा

किसके लिए प्रतीक्षा प्रतिपल
किसके लिए लगन इतनी

किसका यह सबध सनातन आँसू से मुस्कान से।
ओ अनदेखे चांद तुम्हे मैं क्या कहदूं अनुमान से॥

सौरभ के जालो मे यो ही मलय उलझता जाता है
गीले क्षण की बात न जाने किसको कहाँ सुनाता है
किसके बन्धन मे मन मेरा परवश हो सुख पाता है
कौन विचारो की लहरो पर तिर तिर आता जाता है

किससे प्रीत किये जाता हूँ
किसको कहाँ समर्पित मैं

किन पथो मे पलक बिछी हैं पूछा मन अनजान से।
ओ अनदेखे चांद तुम्हें मैं क्या कहदूं अनुमान से॥

ये नद-नाले, चौड़े सकरे मचले से खो जाने को
बूंद बिचारी भूली भूली सागर सी लहराने को
मेरा तो अस्तित्व न कोई, मैं केवल प्रतिछाया हूँ
यह मेरी आवाज नही है गीत सुनाया गाया हूँ

ना जाने यह किसका लेखा
जनम जनम मे लिखता हूँ

किसने जनमगाँठ का रिश्ता जोड़ा महाप्रयाण से।
ओ अनदेखे चाँद तुम्हे मैं क्या कहदूं अनुमान से॥

केवल दर्द आचमन मेरा

पलक पाँवडे लगी बिछाने फिर गलियाँ पतझारो की ।
तुम ही बोलो ! कैसे देखूं अब मैं बाट बहारो की ।।

गोटा पडा किरण का काला
राहो मे खो गया उजाला
भ्रम की पर्त कांच सी चटकी,
हटने लगा आँख से जाला

सतरगी तम की तरुणाई
अब ज्यो कण कण विभा समाई

बुझे हुये दीपक के गुल से निकली ज्योति मचलती ऐसी,
चौधा गई सृष्टि यह सारी सूरज चाँद सितारो की।
तुम ही बोलो ! कैसे देखूं अब मैं बाट बहारो की ॥

आडम्बर के बादल उघरे
स्वप्न सभी आकाशी बिखरे
कोई तपसिन रुह रूप की,
जैसे तपोभूमि से गुजरे
खुला ग्रन्थि का कोना कोना
मन अबोध जैसे मृगछौना

राग सहित पखुडियाँ काँटे मिलते मुग्ध सहज हो जैसे
वैसे ऋतु के हृदय न डोली किलकारी कचनारो की।
तुम ही बोलो ! कैसे देखूं अब मै बाट बहारो की ॥

सहने लगी बिछावन सलवट
लेने लगी जिन्दगी करवट
चिल्लाकर हारा कोलाहल
गाने लगी मूक हो आहट
करने लगी समर्पण रोली
लय मे लीन हो चली बोली

स्पर्शों के परिवेशो से मुक्त नही होते अब अनुभव,
लो फिर लगी सिमटने सरहद वाणी के अधिकारो की।
तुम ही बोलो ! कैसे देखूं अब मै बाट बहारो की ॥

ढका गर्द मे सारा डेरा
क्या बहार का सांझ सबेरा
क्या सम्बन्ध तृप्ति सुख रस से
केवल दर्द आचमन मेरा

हठवादी है निष्ठा मेरी
कैसे करूँ प्रतिक्षा तेरी

अब तो मेरे रोम रोम को रौंद चली ऐसी पदचापें,
जाग उठी अद्वैत आत्मा अन्तर्दाह दरारों की।
तुम ही बोलो ! कैसे देखूं अब मै बाट बहारों की ॥



ऐसे बिछुड़े हम

बिछुड़े तो ऐसे बिछुड़े हम दर्शन तक को तरस गये,
तुम्हे न कोई तीर मिल सका,
हमे न कोई लहर मिली।

कभी गीत गुन्जन के दिन थे अब अनुगूंजो को तरसे
टूक टूक व्यक्तित्व फूल का कुछ आवाजो के डर से
टाँके लगे होठ पर चिन्दी मुस्कानो की अटक गई
चिन्ताग्रस्त थके चहरे की झुर्री ज्यादा लटक गई

आलपिनो की जग खा गई लगन पत्र के लेखो को
तुम्हे न पहुँचे काग सँदेसे
हमे न कोई खबर मिली।

चमगादड की तरह चीखकर भागा हारा हुआ वचन
तनिक हथेली को गरमाकर बर्फ हो गई एक छुअन
तस्वीरो को उलट प्रभजन कह अभाव की बात गया
जिसका तकिया लिया ओस ने झर सहसा वह पात गया

फिर बनजारिन आँख अश्रु को थाम अकेली निंदियायी
तुम्हे पडावो ने भरमाया
हमे न कोई डगर मिली।

ओ मिलने के पर्व यात्रा मोडो से प्रारम्भ हुई
किसी वस्त्र के लिए निरन्तर रेशो मे बट रही रुई
पहनावो मे पहचानो के बोल सुपरिचित बदल गये
लौटें वहाँ भीड के भटके बहुत दूर हम निकल गये

दाता के द्वारे पर जाकर रीती झोली फैलायें
तुम्हे न वह सतोष मिल सका
हमे न इतनी उमर मिली।

ज़हर जहर है केवल तब तक

कैसे मानूँ बात तुम्हारी जीवन जिया नही जाता है।
जहर, ज़हर है केवल तब तक, जब तक पिया नही जाता है।।

अर्थ हीन तो नही दूरियाँ
जिनमे यह ससार लीन है
पला अभावो की गोदी जो
वह सपना सबसे हसीन है

सपनो का यह पावन आँगन सबको दिया नही जाता है।
जहर, जहर है केवल तब तक, जब तक पिया नही जाता है।।

जिन भूलों से बनी जिन्दगी
उन भूलों को कहाँ सुधारूँ
जिस आँगन का कण कण दर्पण
कैसे उसकी धूल बुहारूँ

जिनको नजरें परस चुकी हो, परिचय किया नही जाता है।
जहर, जहर है केवल तब तक, जब तक पिया नही जाता है॥

तुम हो वहाँ, जहाँ तक दुनिया
लगता है हर फूल चमन है
तुमको परस खिली जो माटी
उसको सौ सौ बार नमन है

अनुरागी स्वर गगन हो गया, वापिस लिया नही जाता है।
जहर, जहर है केवल तब तक, जब तक पिया नही जाता है॥



कभी अकेला याद करूँगा

विदा ! किन्तु अनुरक्ति रहगयी इस नगरी मे गीले मन–
कभी अकेला याद करूँगा कभी भीड़ कोलाहल में।

मिलते वक्त सपन थे अनगिन
चलती बार कहानी है
आगे है विश्वास संग में
पर भाषा अनजानी है

गहन अनिश्चय मे रहना है
बहना है केवल बहना है

रोज़ अल्पना पूर ढलेंगी संध्याएँ नवरंगो की
मधुर दिलासा दे बिछुड़ेंगे, आवन के पल कल कल में ।
कभी अकेला याद करूँगा कभी भीड़ कोलाहल में ।।

चमन खिलाया है कसमो ने
पखों पर सध रहा गगन
प्राण ! हमारे अनुबन्धो मे
माटी की उन्मुक्त लगन

माटी के ये नयन हमारे
हेरेंगे कुछ हारे हारे

कभी समर्पित क्षण भटकेंगे कभी सितारे बुझ लेंगे
होगा चाँद न उजला तुम बिन अवगाहे गगाजल मे ।
कभी अकेला याद करूँगा कभी भीड़ कोलाहल मे ।।

रितु को थोड़ी देर रोकले
मुझसे कहा गुलाबो ने
अजुलियों का प्रणय दीप झट
माँगा टोक बहावों ने

परिधि, मगर सबको जाना है
गाना है निशदिन गाना है

यहाँ असीमित नही दूरियाँ, लय के लिए, जियें जब हम
अमर छुअन जो व्याप्त होगई जीवन भर की हलचल मे ।
कभी अकेला याद करूँगा कभी भीड़ कोलाहल मे ।।

कहाँ हो तुम—

अकेला है दिया अंधियार सारी रात भर का है
सुलगती कामनाओं का जमाना बात भर का है

सुना है सूर्य से ज्यादा चमकते हैं कई तारे
मगर वे दूरियों के दायरों में कैद हैं सारे
हृदों की शृंखला टूटे मुझे ऐसा उजाला दो
धरा के प्यार को शाश्वत विहानों का हवाला दो

मिले मोती विरासत में सम्हालूं किस तरह से मैं,
सलोनी ओस का संसार केवल प्रातः भर का है।
अकेला है दिया अंधियार सारी रात भर का है॥

फिसलते राग पलको से लगी बटने यहाँ नजरें
निमन्त्रण दे अँदेशो को चली उडती हुयी खबरें
तिलस्मी उम्र छूती है रहस्यो के नये बादल
बदलता दर्द का अनुभव, बदलता आँख का काजल

मगर अन्दाज फिर भी प्यास का इतना रहा मुझको
पपीहा स्वाति का याचक नही बरसात भर का है।
अकेला है दिया अँधियार सारी रात भर का है॥

किसी सीमान्त पर हारी अकेली हर कहानी है
मगर सारी कथाओ से बडी यह जिन्दगानी है
चिटखते है शिलाओ से समय के स्वर बडे निर्मम
कहाँ हो तुम किसी आवाज पर बहते हुए सरगम

धसकते पैर मिट्टी मे बचाकर किस तरफ रख दूँ
घरौंदे की अहिल्या का सपन आघात भर का है।
अकेला है दिया अँधियार सारी रात भर का है॥

•

मेरा प्रणाम ले अरी ! उपेक्षा

मुस्काया प्रतिबंध लग गये आँख भरी पर नही रो सका ।
तन तो तन है किन्तु यहाँ पर मन भी मेरा नही हो सका ॥

नन्ही सी तुतलाती कुटिया
दैत्याकार घेरता कुहरा
मेरी कौतुक नाव कागजी
और उमडता सागर गहरा

एक हृदय हर तरफ पुकारें
एक बाँध सौ पडी दरारें
यों विवेक शतरंजी हारा
डोल गया धीरज का पारा

पीड़ाओं के मरुप्रदेश पर उमड़ उमड़ कर मेघ याद का
हुवा गया रेतीले टीले लेकिन अकुर नहीं बो सका।
तन तो तन है किन्तु यहाँ पर मन भी मेरा नहीं हो सका ॥

झुकी पलक का आत्म निवेदन
मुझे लगा संसार मिल गया
लेकिन भरम कलश क्या फूटा
पका आक का योड खिल गया

प्रीत मिली पर सग भुलावा
भरता गया हृदय मे लावा
श्रद्धा को विश्वास छल गया
उगते उगते सूर्य ढल गया

दिन दरिद्र से मिले भटकते ककड ज्यो कचन की नगरी,
रात मिली बेचैन इसकदर एक सितारा नही सो सका।
तन तो तन है किन्तु यहाँ पर मन भी मेरा नही हो सका ॥

जीवन की शरमीली घाटी
पार कर चली शरद सुहानी
इतना साथ दे सके सपने
जैसे बचपन सुनी कहानी

जितने भी थे सग सहारे
सब बहाव से कटे किनारे
खुशियो की फसलो पर पाला
उर अकित पतझर का छाला

हुई विदेशी गंध इस तरह नाता तोड़ सघन कुन्जों से
वीतराग हो गयी बहारें सरसिज माला नहीं पो सका।
तन तो तन है किन्तु यहाँ पर मन भी मेरा नहीं हो सका॥

यहीं निराशा कहीं दुहाई
अनुभावों की राह अंधेरी
चितवन की ओटों में बैठी
घात लगाये घृणा अहेरी

कोमल वाणी जहर बुझाई
और तर्क के तीर नहाई
व्यवहारों की धन्य नगरिया
रीती छलके जहाँ गगरिया॥

बाहर के बातून रंग यों छेड़ गये निर्मल वसनों को
भीतर की अव्यक्त कालिमा कोई उबटन नहीं धो सका।
तन तो तन है किन्तु यहाँ पर मन भी मेरा नहीं हो सका॥

अरी उपेक्षा तुम प्रणाम लो
अगर नहीं तुमसे मिल पाता
तो शायद यह तन का कंचन
बिना तपाया ही रह जाता

क्योंकि समय किसको हलचल में
स्वार्थों की गहरी दलदल में
चला चली की प्रबल घड़ी है
सांकल की कमजोर कड़ी है

मेरा तो अपनापन इतना हर बेगानी परछाईं से
टूक टूक हो गया आइना प्रतिबिम्बों को नही खो सका।
तन तो तन है किन्तु यहाँ पर मन भी मेरा नही हो सका॥



पर विदेह अधिकार तुम्हारा

बाहर भीतर बहुत अँधेरा मन मेरा घबराता है
पता नही किसलिए हृदय यह तुम्हे पुकारे जाता है

इतना सूना समय कि अपने आप बहकने लगता हूँ
छूकर अपनी देह हाजिरी स्वय परखने लगता हूँ

लगते हैं बेकार आइने
बिम्बित होता रूप नही
जैसे किसी महकते दिन की
रूठ गयी हो धूप कही

अनुगुन्जित मन आवाजा से गीत न बाहर आता है ।
पता नही किसलिए हृदय यह तुम्हे पुकारे जाता है ।।

हार सिगार हठीला उन्मन मौन कनेरो की डाली
गेंदा डूब रहा है गम मे, भटक गया है वनमाली

दहक रही पीपल की छाया
जहाँ बैठ हम गाते थे
दो मीठे बोलो से दुनिया
सुन्दर अधिक बनाते थे

किन्तु आज मन के वक्षो को घायल क्षण पिघलाता है ।
पता नही किसलिए हृदय यह तुम्हे पुकारे जाता है ।।

दोषी दिखते द्वार देहरी आगन भी सकुचाया सा
प्राण ! तुम्हारी सीख सिखाया सुगना है भरमाया सा

बिछुड रहा परिव्राजक काजल
दुखी दृष्टि की कथा यही
सुधि परदेशी जिसे ढूढती
उसका कोई पता नही

परिक्रमा दे रही जिन्दगी स्वप्न नही फल पाता है ।
पता नही किसलिए हृदय यह तुम्हे पुकारे जाता है ।।

कहते हैं संदर्भ चोद गढ नया रूप दे गीतों को
आने वाले का स्वागत कर ध्यर्थ हेर मत बीतों को

तू है कल्पवृक्ष की छाया
मन मांगा मिल जायेगा
घटा उघरने दे सूरज से
बाग आप खिल जायेगा।

पर विदेह अधिकार तुम्हारा रह रह कर अकुलाता है।
पता नहीं किसलिए हृदय यह तुम्हें पुकारे जाता है॥



कण कण लेखा

बिखर गये विश्वास सलौने
उमर गुलाबी कही खो गई
पंथ जोहते हुए तुम्हारी
जाने कितनी देर हो गई

समय बदलता रात-सवेरा, अँधियारे-उजियारे मे
चला किसनवा जीवन खेती भोर पडे हरकारे मे
उमडे सूखे कितने सावन, कोंपल झर झर फूट चली
फिर फिर फूले फूल बाग मे, जिन पर मचली गली गली

जाने कितनी बार जागकर
पतझर गोद बहार सो गई।
पथ जोहते हुए तुम्हारी
जाने कितनी देर हो गई॥

पहन वसन्ती नूतन चोली, लहराती नव चूनरिया
खड़ी, चाँद से होड़ लगाये, गोरी गोरी गूजरिया
रास रचाये समय साँवरी खनके हाथों का कंगन
पाँव महावर चम चम चमके, दमके माथे का चन्दन

सुन्दरता की पैंज पैंज में
याद तुम्हारी नजर खो गई।
पथ जोहते हुए तुम्हारी
जाने कितनी देर हो गई॥

धूल उठी गतिमान आँधियाँ, जमी उफनती जलधारा
परिवर्तन ने भूधर उलटे दीप बनाया ध्रुवतारा
धब्बों पर आकृतियाँ उभरीं, मुख धोया तस्वीरों ने
सबको अवसर दिया एकसा, मालाओं, जन्जीरों ने

हुए अनेकों दृगभ्रम ऐसे
हँसते हँसते सृष्टि रो गई।
पथ जोहते हुए तुम्हारी
जाने कितनी देर हो गई॥

आये गये अनेकों पंथी सुनी नहीं पगध्वनि तेरी
चौंका उजली लगी तुम्हीं सी धूल पड़ी छाया मेरी
कण कण देखा बिम्ब तुम्हारा, भरम हट गया आँखों से
झाँक उठे दो नयन सलोने रोम रोम सूराखों से

लहराया संतोष हृदय में
समता ऐसे बीज बो गई।
पथ जोहते हुए तुम्हारी
जाने कितनी देर हो गई॥

दया दूध सी उफनी है

छूटे गांव सपन के पीछे नेह मोह के गलियारे,
फिर भी करती पीछा मेरा कोई आकुल परछांई।

दृष्टि धुएँ पर बनती शक्लें
कुछ अतीत कुछ अनजानी
सहसा उभर अलग हो जाती
दो आँखें कुछ पहचानी

वे आँखें जिनमे करुणा का गंगाजल भर डोला हो
जिनने जनम जनम में मेरे विश्वासों को तोला हो

हार गयी यूँ सजग चेतना, जीत चले निदियारे क्षण,
भर भर प्याले खड़ी सामने बेहोशी की अमराई।

पथराये स्वर लगे टूटने
एकाकी मन दहल गया
काँप उठा अस्तित्व अधर से
नाम किसी का निकल गया

धूल बन गई होगी मेंहदी अर्घ्य शीघ्र दो तुलसी को
सबके भाग्य नही सुख होता यो समझा दो हलदी को

चैन नही मिलता इस मन को बंशीवट की छांव तले,
आस पास ही गूंज रही जब कोई घायल शहनाई।

किसकी याद कहाँ कब आये
इसका कोई नियम नही
बन्धन टूट भले ही जाये
किन्तु टूटती कसम नहीं

भाग रहा हूँ बहुत तेज मैं, परिधि घेरती आती है
घबरा, देह-देहरी, दुलहन श्वांस लांघती जाती है

करे प्रकाशित ज्ञान किस तरह अब विरक्ति के दीपक को
आंधी बनकर मचल रही जब कोई भावुक कजराई।

जिसकी गोद सहज खो जाऊँ
दुनिया इतनी नही बड़ी
फिर भी सम्भव नही तोड़ना
सम्बन्धो की विरल कड़ी

घृणा नही प्रतिकार प्यार की, दया दूध सी उफनी है
चाहे तृप्ति किसी पनघट की, किन्तु प्यास तो अपनी है

लौटादी यदि लहर कूल ने लगन नही इसकी दोषी
अन्तंमुखी अधिक होती है यहाँ चाह की गहराई।
छूटे गाँव सपन के पीछे नेह मोह के गलियारे
फिर भी करती पीछा मेरा कोई आकुल परछाँई ॥

फिर गुफाओ मे कही घटे बजे हैं
घुप अँधेरा है मगर सूरज उगे है
अजली मे फिर सितारे भर गये है
कुछ कपूरी क्षण उडानें उड गये है

फिर फूंक मारी सृष्टि कोई

बुलबुलो मे रग लाई, दुहाई है दुहाई।
फिर वही आवाज आई, दुहाई है दुहाई॥

मैं जहाँ जन्मा वहाँ ऐसा हुआ है
सेमरो पर बैठता भूखा सुआ है
जिनको अधिक गाया कभी पाया नही है
सगीत अनहद हाथ मे आया नही है

जीत इतनी हारकर मैंने

फिर नई बाजी लगाई, दुहाई है दुहाई।
फिर वही आवाज आई दुहाई है दुहाई॥

•

आवाज़ : विस्मृति और कहानी

आवाज आई

फिर वही आवाज आई, दुहाई है दुहाई।

फिर हवाओ मे बहम बहने लगा है
अनहोनियो मे वक्त फिर रहने लगा है
फिर लहर ने कूल की काई हटाई
पार की लोटी सरी मझधार आई

फिर डुबकियां खाने लगा मन,

लुटगई सारी कमाई, दुहाई है दुहाई।
फिर वही आवाज आई, दुहाई है दुहाई॥

फिर गुफाओं मे कहो घंटे बजे हैं
घुप अँधेरा है मगर सूरज उगे है
अंजली मे फिर सितारे भर गये हैं
कुछ कपूरी क्षण उड़ानें उड़ गये है

फिर फूंक मारी सृष्टि कोई

बुलबुलो मे रग लाई, दुहाई है दुहाई।
फिर वही आवाज़ आई, दुहाई है दुहाई ।।

मैं जहाँ जन्मा वहाँ ऐसा हुआ है
सेमरो पर बैठता भूखा सुआ है
जिनको अधिक गाया कभी पाया नही है
सगीत अनहद हाथ मे आया नही है

जीत इतनी हारकर मैंने

फिर नई बाजी लगाई, दुहाई है दुहाई।
फिर वही आवाज़ आई दुहाई है दुहाई ।।

आवाज़ : विस्मृति और कहानी

आवाज आई

फिर वही आवाज़ आई, दुहाई है दुहाई।

फिर हवाओं मे वहम बहने लगा है
अनहोनियो मे वक्त फिर रहने लगा है
फिर लहर ने कूल की काई हटाई
पार की लोटी तरी मझधार आई

फिर डुबकियां खाने लगा मन,

लुटगई सारी कमाई, दुहाई है दुहाई।
फिर वही आवाज आई, दुहाई है दुहाई॥

फिर गुफाओ मे कही घटे बजे हैं
घुप अँधेरा है मगर सूरज उगे है
अजलो मे फिर सितारे भर गये है
कुछ कपूरी क्षण उडानें उड गये है

फिर फूंक मारी सृष्टि कोई

बुलबुलो मे रग लाई, दुहाई है दुहाई।
फिर वही आवाज आई, दुहाई है दुहाई ।।

मैं जहाँ जन्मा वहाँ ऐसा हुआ है
सेमरो पर बैठता भूखा सुआ है
जिनको अधिक गाया कभी पाया नही है
सगीत अनहद हाथ मे आया नही है

जीत इतनी हारकर मैंने

फिर नई बाजी लगाई, दुहाई है दुहाई।
फिर वही आवाज आई दुहाई है दुहाई ।।

०

मैं तुम्हें भूला नहीं हूँ

आज भी आकृति तुम्हारी
लौटती है अनपुकारी

चेतना के द्वार सहसा खटखटाती है
फिर किसी सीमान्त तक मुड़मुड़ बुलाती है
नित नये आकाश में झूले झुलाती है
मैं जहां भूला नहीं हूँ।
मैं तुम्हे भूला नहीं हूँ॥

हाँ वही आकृति तुम्हारी
फिर बना देती पुजारी

लीक शिशु की लेखनी सी नित कढाती है
अक्षरों में अर्थ अपना ही जड़ाती है
गधमय परिवेश वह मेरा बताती है

मैं जहां फूला नहीं हूँ।
मैं तुम्हें भूला नहीं हूँ॥

एक वह आकृति तुम्हारी
जो कि जीता दांव हारी

जिन्दगी के पृष्ठ ऐसे खोल जाती है
देह टूटन जहां कविता रचाती है
पैर धरती पर कहीं गहरे धसाती है
मैं जहां भूला नहीं हूँ।
मैं तुम्हे भूला नहीं हूँ॥

हार जीत की यही कहानी

रोती शबनम सुबह सुहानी ।
हार जीत की यही कहानी ।।

कोई प्यास तृप्ति पर हँसती
कोई तृप्ति कभी चुप डसती
बुझता शोला उडता पानी ।
हार जीत की यही कहानी ।।

इधर रोशनी उधर अँधेरा
घेरे को कसता है घेरा
सभी पथिक हैं दिशा अजानी ।
हार जीत की यही कहानी ।।

सपने सत्य नही होते हैं
दृश्य दूर के ही होते है
मीठी निंदिया, पीर पुरानी ।
हार जीत की यही कहानी ।।

लहर लहर पर लिखा इशारा
नाव न डूबे पास किनारा
सागर खारा पर अभिमानी ।
हार जीत की यही कहानी ।।

रग अनेको तस्वीरो के
नाम बहुत हैं जजीरो के
पहन चले या है पहनानी ।
हार जीत की यही कहानी ।।

•

मेरी याद तुम्हें आयेगी

रह रह कर दुलरा जायेगी
पल छिन में सिहरा जायेगी

कहीं न बोलेगी कुछ तुमसे, कहीं बहुत बतरा जायेगी ।
चाहे आज न मानो, कल फिर मेरी याद तुम्हें आयेगी ॥

लहर गया मधु ज्वार नसों में, साँसों में भर गई खुमारी
जहाँ लजा कर अवगुंठन से तुमने पहली सृष्टि निहारी
तले उनींदे आकाशों के जिस दम हमने होश सँभाला
गंधों का तूफानी सागर बाहों में भर कर मथ डाला

जिस दिन धूमिल दृष्टि पटल पर छा जायेंगी वे तस्वीरें,
तन मन व्यापी पीर अजानी जहाँ कहीं इतरा जायेगी ।
मेरी याद तुम्हें आयेगी ॥

जब बहार के दिन पलटेंगे, जब ऋतुएँ बदलेंगी चोला
जब गुलाब के खिले अधर पर समय लिखेगा गीत अबोला
जब पराग के देश समर्पित होगी कुछ चाहे अनजानी
कही चन्दनी निश्वासो से महकेंगी राहे वरदानी

जब महुओ की प्यास तुम्हारे आँगन बीच मचलती होगी,
अहसासो की दहक, अनमनी, अकुलाकर टकरा जायेगी।
मेरी याद तुम्हे आयेगी ॥

जब लौटेंगे बिछुड़े साथी उमगेगा छवियो का काजल
सूना सावन देख, तुम्हारे नयनो मे घुमडेगा बादल
जब त्योहारो पर सौदागर भीड सितारो को मोलेगी
चुभ चुभ कोई फाँस तुम्हारे सारे संयम को तोलेगी

जब कोई रसवत गगरिया लौटेगी घर गुन गुन गाती,
लगन बाँसुरी साँवरिया की साधो को लहरा जायेगी।
मेरी याद तुम्हे आयेगी ॥

मन से मन के सम्बन्धो का है पूरा विज्ञान न कोई
किन्तु सत्य उर कढे गीत जो, शब्द मिटे आवाज न खोई
गूँजे समतल, गगन, घाटियाँ, गहराई पाताल फोडकर
तन से तन को लम्बी दूरी हृदय पढ गया जहाँ जोड कर

जिस दिन भी झकझोर चलेंगी आग्रह जडी आँधियाँ रितु की,
उम्र भिखारो मनुहारो पर जहाँ बिठा पहरा जायेगी।
मेरी याद तुम्हें आयेगी ॥

•

रात प्रतीक्षा की

आहट लेते हुए काटदी हमने रात प्रतीक्षा की।

धुंधले पंथ दिये ने पाये
चौखट पर संदेह समाये

छत पर टपके थके सितारे
बूढ़ा चांद खांस कर सोया
गुजरी सड़क घहरती नदिया
जंगल शहर बीच आ खोया
शाख छोड़ कुछ उड़े पखेरू
आदमखोर बाघ गुर्राये
सन्नाटे की बांह पकड़कर
अनगिन भूत प्रेत चढ़ आये

दहशत लिये याद यूँ आई
घात लिये ज्यों हाँड़ी धाई
ग्रंघ भरोसे भड़के डोले
तम ने कई टोटके मोले

रोते हुए बिलावों में हम बैठे रहे फुरफुरी लेते
स्याह अधिक हो गई आपही पड़ी दर्द की दीक्षा की।
आहट लेते हुए काट दी हमने रात प्रतीक्षा की॥

जुगनू से समझाते साथी
घर पर जिनके दिया न वाती

आँखें गोल, पैर दो उलटे
उल्लू को वश करते मंतर
दाँत फाड़कर सिद्ध-सयाने
बाँध गये बाँहों में जंतर
पीपल चढ़ा अघोरी कोई
समझा गया चाँद की दूरी
किन्तु समय ने कभी न समझी
क्या तेरी मेरी मजबूरी

कितना थमा आँख मे पानी
कितनी रही मूक हो वानी
कितनी आग लिए तुम डोले
हमने सहे कहाँ हिचकोले

पीड़ा जो हमने गा कहली, तुमने आह भरे बिन सहली
फीर भी ग्रोस सृष्टि को दे दी हँसती भोर समीक्षा की।
ग्राहट लेते हुए काट दी हमने रात प्रतीक्षा की॥

प्रिया ! नहीं तुम संग

शोख गुलाबी दिन उगते है मदिरायी हर रात है।
प्रिया ! नही तुम सग, रग की फीकी सी बरसात है ॥

केशर कहती अरे पास आ, चन्दन तनिक लगादूँ मैं
सरसो बोली अरे बावरे नूतन वसन पिन्हादूँ मैं
कलियाँ पूछ रही अचरज से तू क्यो ना मुस्काता है
कहते भ्रमर गा रही दुनिया तू ही क्यो ना गाता है

घकुन सोचती मेंहदी बोली सूना तेरा हाथ है।
रही अकेले नही बताओ कौन तुम्हारे साथ है ॥
प्रिया ! नही तुम सग, रग की फीकी सी बरसात है ॥

मचल मचल कर किन्शुक उजला चीर परसने धाये हैं
किलकारी भरते गुलाल के हाथ गाल तक आये हैं
कहती रग भरी पिचकारी देखो आज सम्हलना तुम
यह तो हलचल वाला दिन है बीत नही सकता गुमसुम

झिलमिल करती मुग्ध सरोवर, झरता गध प्रपात है।
किन्तु चरण वे कहाँ कि जिनको अर्पित हर जलजात है॥
प्रिया ! नही तुम सग, रग की फीकी सी बरसात है॥

नदी लजाती सी मिलती है जा सागर की बाँहो मे
गाँव गाँव मे रुके बटोही मैं ही केवल राहो मे
जले साँझ के दिये पूछते तुझे कहाँ तक जाना है
आकुल धूल गगन से कहती यह पथी अनजाना है

बोली परख ज्योतिषी कोपल यह अँखुये सा गात है।
जिसने उगते उगते शायद जीया झझावात है॥
प्रिया ! नही तुम सग, रग की फीकी सी बरसात है॥

वे भी दिन थे जब मरुथल को हम कुन्जो तक लाते थे
कभी चाँदनी की धारा पर सपन तरी तैराते थे
देती थी गुदगुदी हवायें, घटा देख लहराती थी
जिस माटी को छू लेते थे वह कचन बन जाती थी

पर अब लगती रैन अँधेरी होता नही प्रभात है।
मुझको सगीतो के जग का सूनापन सौगात है॥
प्रिया ! नही तुम सग, रग की फीकी सी बरसात है॥

●

अक्षर मन

अक्षर मन बिछुड गया शब्दो की काया से
अनबोला गीत खडा आज कुछ इशारो का ।
उत्तर बिन बीत चला उमस दिन पुकारो का ॥

पपिहारे अधर और नैन दो चकोरो के
हँसो के पखो पर सपन लिखे मोरो के
कोयल की कूक टोह गूँजती दिशाओ मे
तितली के रग घुले महकती हवाओ मे

दाखो का दिवस वही शाखो से उतर गया

ठूंठो पर ठहर चुका पवन गध ज्वारो का।
उत्तर बिन बीत चला उमस दिन पुकारो का ।।

दूब पर छलांगो के अब न हिरन दिखते हैं
पेडो के तने ढोर सीग नही घिसते हैं
टोह मे शिकारो के रात नही घुलती है
गाय के रँभाने से पौर नही खुलती है

साँझ पडी, चौपालें चारा रख भरी नही

कहाँ अब मजीरो मे राम जीत हारो का।
उत्तर बिन बीत चला उमस दिन पुकारो का ।।

आँखो को मलमल कर दृश्य कई बदलाये
भूल भूल याद किया सुमरि सुमरि पछताये
हाथो पर ठोडी को टेक कही खो बैठे
नैन मे निवेदन था मगर बहुत रो बैठे

एक बूँद आँसू की वसियत के साक्षी हम

उर से, तट बाँध खडे लहर की पछाडो का।
उत्तर बिन बीत चला उमस दिन पुकारो का ।।

साँझ कहे अब साथ न दूँगी

साँझ कहे अब साथ न दूँगी मैं दिन भर की हारी हूँ।
रात कहे तुम रुको मुसाफिर मे कारी अँधियारी हूँ॥

दिन का रेशम छोड गया है,
बुन भूलो का जाला
चुभती है अब असफलताएँ
काटे ज्यो विषधर काला

डूब रहा है भाग्य सितारा
सरक रही है दूरी
मिला निमन्त्रण आज तुम्हारा
आने की मजबूरी

समय कहे यह घडी मिलन की आँख कहे निंदियारी हूँ।
साँझ कहे अब साथ न दूँगी मैं दिन भर की हारी हूँ॥

बीत गये क्षण अगूरो के
गया गुलाबी मौसम
छिडता रैन बसेरो मे अब
सन्नाटे का सरगम

आये आँख चुराने के दिन
सुमन सभी मुरझाये
दगाबाज सौरभ ना महके
गीत न कोई गाये

कहता है पतझार गले लग, मैं भी तो अवतारी हूँ।
साँझ कहे अब साथ न दूंगी मैं दिनभर की हारी हूँ॥

धूल बनी माथे का चन्दन
ज्योति धुंधलती जाये
पलपल बीती जाय उमरिया
याद बावरी आये

मनसा हँस उगलता मोती
मानसरोवर सूना
जख्म उभरने लगे अनेको
दर्द हो गया दूना

तृप्ति कहे घट रीत गये सब, प्यास कहे पनिहारी हूँ।
साँझ कहे अब साथ न दूंगी मैं दिन भर की हारी हूँ॥

पता नहीं क्या हुआ
हो गये सहसा अनुभव खारी
सोच सोच में समझ थक गई
गति चल चलकर हारी

टूट गया जादू रंगों का
धूप ढुलकने आई
पिघला यूं व्यक्तित्व लौह का
आहत है परछाई

जिसके बांधे पवन बंध गया उस दिन की बलिहारी हूँ।
सांझ कहे अब साथ न दूंगी मैं दिन भर की हारी हूँ॥

वे ही पहले भूल गये जो
अधिक याद करते थे
उन्हें बड़ा संकोच कभी जो
बाहों मे भरते थे

ओ ! रसवन्ती दुनिया तेरा
गीत जनम भर गाया
चलती बार मुझे तुम देना
सजल नयन का साया

अपराधी हूँ नही किसी का भूल चूक संसारी हूँ।
सांझ कहे अब साथ न दूंगी मैं दिन भर की हारी हूँ॥

•

यार बसंत

जख्म हर दर्पण बना पर हम मुकरते ही गये
वक्त नें जितना डुबाया हम उबरते ही गये
गीत का क्षण सिसकियो से बात की गाते हुए
दर्द समझा पर ठहाको से गुजरते ही गये

यार बसंत

आओ यार बसंत।

लाये होगे तुक्तक मुक्तक
चम्पू गीत अगीत
कथा पुरानी नई सचेतन
ढपली निज संगीत

रहे अकेले एक बरस तुम

कुण्ठा जहाँ असंत।
आओ यार बसंत॥

घट, पनघट, अमराई, भाई
आये होगे छोड़
राह खिलाये होगे थूहड़
तुमने लोकें तोड़

क्षण जीवी तुम भोगे होंगे
जीवन मृत्यु अनंत।
आओ यार बसंत॥

ठंडा गरम पियोगे तुम तो
तज केशरिया दूध
आगम रोशनदान फाँदकर
गमन खिड़कियाँ कूद

पाहुन पलक बिछायें किस ढिग
तुम हो आये चन्ट।
आओ यार बसंत॥

०

आँखो का बँटवारा

नारंगी के छिलके भीतर जितनी होती फाँक।
उग आयी मेरे चहरे पर सचमुच उतनी आँख।।

कुछ आँखें मैं नई प्रिया के बटुए मे रख देता हूँ
जब बतराती सखियो से वे ताक झाँक कर लेता हूँ
जायें इकली मार्केट तो खैर खबर ले आता हूँ
सीट पास की सीनेमा मे बिना टिकट पा जाता हूँ

लेता चील झपट्टा गुप चुप जब वे खाती दाख।
उग आयी मेरे चहरे पर सचमुच कितनी आँख।।

बच्चों के बस्तों में आँखें चुपके से दुबकाता हूँ
क्लास रूम में जाकर सबसे ज्यादा शोर मचाता हूँ
मास्टरजी जब हंटर लेते तो करवट हो धाता हूँ
छोले खाते वक्त चुराये पैसे सब गिन आता हूँ

शाम पूछता बोलो बेटो कितनी खायीं साँख।
उग आयी मेरे चहरे पर दिखनी सिखनी आँख॥

निंदियारी आँखें दफ्तर की कुर्सी पर बिठलाता हूँ
जगती आँखें जा अफसर की टेबुल पर धर आता हूँ
सहयोगी क्या याद करेंगे फिरनी आँख दिखाता हूँ
सहयोगिन का गर्व चूर हो हिरनी आँख बताता हूँ

समझ बूझ निर्णय की आँखें वे जो झाँकें काँख।
उग आयी मेरे चहरे पर सचमुच नटनी आँख॥

बाकी बची फालतू आँखें जन सेवायें करती हैं
श्लील और अश्लील पोस्टर दीवारों पर धरती हैं
कहीं नोकरी लगवाती हैं कहीं चुगलियाँ खाती हैं
कुछ फुटपाथों पर सोती हैं कुछ कारों में धाती हैं

कुछ बटोरती सोना चाँदी कुछ बँटवाती राख।
उग आयी मेरे चहरे पर कटनी-छटनी आँख॥

व्यक्तिगत स्पेशल आँखें नित कविता लिखवाती हैं
केश पराई जाई के वे नागफाँस बतलाती हैं
नये नये सम्बोधन गढ कर प्रीत नई दर्शाती हैं
उनकी सुन्दर देह व्यर्थ ही घास-फूंस चिपकाती हैं

उस पर भी तुर्रा प्रिय आना गह दादल की पाँख।
उग आयी मेरे चहरे पर षटरस चखनी आँख॥

●

सिगरेट का धुआँ

जब कोयल की कूक
अचानक सही न जाती
गध क्षणो की पीर
अपरिचित गही न जाती
सुनी न जाती करुण पुकार
दुहाई अन्तर स्वर की
चढी न जाती इकले सरग
सीढियाँ लीपे घर की
साँझ कसकती रगो वाली
रात कसकती गधो वाली
बोझ नया दुखता कधो पर
अनुगुन्जित होती पथो पर
पायल की झनकार पुरानी
बीती अनहोनी अनजानी

तब यही यही सिगरेट,
कि जिसके जरदे पर,
पड़ा हुआ कागज का परदा है—
भरमों के परदे सरका कर
धुंधले उजले चित्र बनाकर
ले आती है उसी गली में
जिसमे मेरा आना जाना।
जहाँ दर्द के सावन भादों
सीखा करते मन बहलाना॥

इससे मैंने जलना सीखा
कठिन ताप तन मलना सीखा
धूंए सा उड़ जाना सीखा
परहित में मर जाना सीखा
इस जीवन का बहुत मोल है
किन्तु कूप पर रिक्त डोल है
किस के अधर प्यास है कितनी
इसका कुछ अनुमान नही है
मन वालों के यहाँ झमेले
मन क्या रोता ज्ञान नही है
अस्थिर और अनमनी रितुएँ
टूटे क्षण क्षण क्या इठलाना
इस विनाश की फटी बीन पर
रह रह स्वर का क्या अजमाना
समय घड़ी की सुई बदलती
वस्त्र बदलते रूई बदलती
कचन सी यह देह बदलती
नई घटा नित मेह बदलती

बात बदलती जाती सारी—
सावधान जागो जागो रे
ढली साँझ वह रात आरही
सपनों के पिंजरों से उड़कर
तोता पखी बात जारही
जैसे इसका गुल झरता है धीरे धीरे।
लहर बदल कर नया होती नीरे तीरे।

एक रोज़ जब कहीं पथ उर दुख सीचा था
इसे खींच मैंने कश लम्बा खींचा था

श्यामल श्यामल, कोमल कोमल
धूँए के गोले उड़ निकले
नन्हे नन्हे बालक जैसे
भोले भाले तुतले तुतले।

बदला इनका रूप तनिक में
होते गये युवा सरीखे
सीख गये अन्दाज़ अनोखे
भरमाने के तौर तरीके
मस्ताने मदमाते छाये
सावन भादों के बादल से
पैने होते गये सहज ही
तरुणी के तिरछे काजल से
होने लगे तभी कुछ गाढे
और कहीं पर हल्के छितरे
कहीं गुँथे से कहीं लुटे से
और कहीं पर बिखरे बिखरे

जैसे चिन्ता और समय मिल
खीच रहे हो
रेखा, सलवट झुर्री सी
किसी प्रोढ के झुक माथे पर।
मुरली छीन, लकुटिया दे दे
फूल खोस ज्यो
बोझा कोई लाद चले
प्रतिबन्ध लगे ज्यो गाते पर ॥

तभी जरा मे बने जरा से
रिश्ता कटने लगा धरा से
दृश्य मिटे रह गये फसाने
नैनो मे पथराये गाने
आया तेज हवा का झोका
रुका न रोके बढ बढ टोका
कुछ तडपन कुछ हिचकी डोली
काँप उठी परदेसिन बोली
हवा हवा मे लीन हो गई
यूं मुखरित तस्वीर खोगई।

यही जिन्दगी यही मौत है
बुनते हम क्या ताना बाना
काढे रग रग के घूंघट
बोले हमने क्या पहचाना।

वोट लूट कुर्सी तक आये
दे दे वचन मुकरते घाये
व्यापारी बन घोखा लाये
किसनाई मे धान छुपाये

वने चिकित्सक बाँटा पानी
वकिलाई भूँठी गुडधानी
कविता लिखी विवाद उठाये
अपने अग्रज से टकराये
देश विदेशी सपने गाये
मचो पर सारगी लाये
लेकिन कितने दिन इतराना
यह कपूर सा रूप सजाना
जिसकी रगत आप उड रही
रोने से मुस्कान जुड रही
जनम जनम यह रुदन चला है
दर्दों मे व्यक्तित्व ढला है
जिसके कुछ अन गहे साज है
सदियाँ गुजरी नाद राज है

तब यही यही सिगरेट
कि जिसके जरदे पर
पडा हुआ कागज का
परदा है—

स्वेत रंग, पर कब इतराती
परदे खोल राज समझाती
धूआँ जहाँ वहाँ सपनाती
बुझने से पहले सुलगाती
सीखा समझा मैंने इससे
जहर उमरिया जीती जिस से ।

०

पैट तंग

पैट तग

केश झुण्ड-सघन कुन्ज, होठो पर रग
काजल का तिरछापन, साडी का ढग
अबतो मिस बतख नाम
मिलती हैं सुबह शाम
कहती हैं सिलवालो पेंट जल्द तग

ललुआ

पेल पेल डण्ड रोज घोट घोट हलुआ
पैंसठ की उम्र व्याह खूब रचा कलुआ
बस्ती मे धूमधाम
हवन-यज्ञ राम नाम
लल्ली चल देख लेहु 'लल्लू' को ललुआ

उधार

सुरमाये पगाये नैनो की मार
बात चली मजनू का बटुआ ही पार
फटा वक्त फाँके मे
कही थेग टाँके मे
किया कभी प्यार नकद किंतु अब उधार

खो

तड़के घर छोड़ चले चहरे को धो
साँझ पड़ी लौटे ले कदमूल जो
बौने हम भूख बड़ी
टूक टूक लड़ा लड़ी
खेल रही थाली मे रोटीजी खो

सड़ा गला अंत

कविता कर नाम किया बच्चन जी पत
चिमटा अब बजा रहे तुक्कड़ जी सत
निकल पड़े कुर्ते मे
कीड़ा ज्यो भुर्ते मे
जन्मे कवि अलाबला सड़ा गला अत

भूख हड़ताल

बरखा मे मेघ करें धूप हड़ताल
गर्मी मे रोज करें कूप हड़ताल
रूठ जाँय छात्र करें
फूट-जाँय पात्र करें
नेता हो जिब्व करें भूख हड़ताल

हाथो में बस्ता

होठो पर गीत धरे हाथो मे बस्ता
लिखने का पकड लिया सस्ता सा रस्ता
रात दिन अडे रहे
मचो पर खडे रहे
बीवी घर छोड चली कविवर हैं खस्ता

सखी

एक सखी स्याम वर्ण, एक सखी गोरी
दोनो की उम्र एक दोनो ही भोरी
मेले मे साथ गयी
पकड पकड हाथ गयी
दोनो का एक साथ हार गया चोरी

अतीत

'जहाँगीर' हार गया 'नूर' गईं जीत
पर्चा दे लौट रही कालिज से प्रीत
बाबर था शेर बबर
पुस्तक मे छपी खबर
चिडियाघर लगा उन्हे आजकल अतीत

चाट

चाट चाट दोने को पत्ते को चाट
चाट यहाँ चाट गये बाबूजी लाट
चाट चाट भेजे को
यार फिर कलेजे को
चाट जो चाट चलो आज मन उचाट

कृषकों का हुक्का

थप्पड़ से जबरदस्त होता है मुक्का
डाकुओं में इसीलिये जन्मा था लुक्का
चूल्हों में आग नहीं
चीर फटे, दाग़ कहीं
लेकिन अब चेत रहा कृषकों का हुक्का

दो भाई

कालूजी बालूजी दोनों ही भाई
एक ब्याह नर्स मिली एक मिली दाई
'जर्नी' में संग चले
सारे पी भंग चले
चारों में शीत चार गर्म इक रजाई

सुन्दरता

सुलेखा जुलेखा से पूछ रही रीझ
सखी बता दुनिया में 'ब्यूटी' क्या चीज़
उत्तर सुन चौंक रहे
रह रह सिर ठोंक रहे
'अरी सखी ! सुन्दरता पिक्चर बदतमीज़'

तटस्थ

एक पियें पत्ती की, चाय एक डस्ट
बीबी दो दोनों को सुबह सुबह कष्ट
दोनों हैं जंगबाज
दोनों के अलग राग
दोनों हैं चेंट „ किन्तु हम हैं तटस्थ

खींचो जंजीर

रेलो मे ठसाठस समाचली भीड
पंडितजी राम भजें मुल्लाजी पीर
सलमाजी लटक रही
ललिताजी अटक रही
ठाडे हम चीख रहे खीचो जजीर

गीत

लगर को डाल खडा वादों का गीत
बजर को खोद रहा खादो का गीत
फैशन अब रीत यही
शेष रही भीत नही
बहना जी सुना रही यादो का गीत

उल्लू

राम करे, जाने कब ऐसा दिन आयेगा
पूत गिद्ध चीलो मे नाम जब कमायेगा
मैना पर झपटेगा
भूखो को डपटेगा
उल्लू यह कुल्लू को गर्मी मे जायेगा

सस्तो किसमिस

कघी कर देख रही कनखो से 'मिस'
कैमरे मे फांस चला 'बाय' एक 'फिश'
कैसी यह अजब घडी
देखी ना सुनी पढी
मूंगफली हुई तेज सस्ती किसमिस

लूप

काँटो को सहता है फूलो का रूप
गढ्ढो मे रहता है शीतल जल कूप
जनसख्या रुकती है
वहम फहम चुकती है
बीबी से कहते हम लगवालो 'लूप'

हजामत की पेटी

कुर्सी पर गोद चढी, बिस्तर पर लेटी
सरे ग्राम बगल बीच इसमे क्या हेठी
सिनिमा का सार लाय
प्यार भरे गीत गाय
सतो यह 'ट्रांजिस्टर' हजामत की पेटी

•

दुनिया : दिन रात : और बटमार

दुनिया बख्तरबन्द

हमारी दुनिया बख्तरबन्द
जामें नही गैर को आवन अपनों राज अखण्ड
तज कूलर कुन्जन क्यो देखें हम जग आग अफण्ड
जगत फजर मे भगे गजर सुन हम टहलत अति मद
लोग वापरे चना चबायें हम चाखें फल कद
हम कब लीनीं शिला झपकियाँ जिन्दाबाद मसद
हम पर असर नही काहूको जीवत है निर्द्वन्द
अपनी प्रीत रजत सुवरन सो गले न फाँसी फद
सोचो रहन अकिंचन तुमहू तज कवितन के छन्द

दिन रात

सनसनियो मे दिन जाते है
रक्तचाप मे रात ।

बढ़ती हुई धड़कनें लेती
सदेहो के स्वप्न
होती सुन्न देह से गुजरा
यह आयातित प्रश्न

सुईयाँ छिदी नसो मे करता
पर रस नित उत्पात ।
सनसनियो मे दिन जाते है
रक्तचाप में रात ।।

पो फटते बाजार उफनते
अण्टी कटती रोज
महिने भर की लगन चूंसती
उगते उगते दोज

गगन तनावो का अपना नित
सहता उल्कापात ।
सनसनियो मे दिन जाते हैं
रक्तचाप मे रात ।।

बटमार

हम जन्मे बटमार
लूटी भोर शाम रँग झपटे गैल खड़े तैयार
ठगे लोग नित बदल मुखौटे हम ऐसे ऐय्यार
मीठे बोल कपट करनी मे, छले लोग हुशियार
काटी गाँठ पोटली छीनी 'ब्लेक' दिया अवतार
भरी कोठियाँ खत्ती अपनी चढ़े गगन बाज़ार
फिर भी पूजी गई शराफत अपनी इस ससार
सीखो यार अकिंचन तुम भी सर्पों की फुफकार

•

कल्पना तुमने मुझे दी

जिन्दगी उतनी जहाँ तक वह रवानी है
शेष पीडा, प्यास उलझन की कहानी है
हम जिसे बदनाम करते है विवादो मे
प्यार वह केवल बहारो की जवानी है

कल्पना तुमने मुझे दी

मैं अकेला लिख रहा था जब कहानी हार की।
कल्पना तुमने मुझे दी प्रीत के संसार की।।

दिन थके माँदे उदासी, अधजगी हर रात थी
अनखिले अनगिन सपन थे, अधबुनी हर बात थी
चाँदनी प्यासी भटकती, छाँह तक दहकी हुई
धूप धुंधली थी दिनों की, हर हवा बहकी हुई

गा उठा कैसे पता क्या पर यहाँ पहले पहल
प्रेरणा तुमने मुझे दी दर्द के शृंगार की।
मैं अकेला लिख रहा था जब कहानी हार की।।

मैं कहाँ था कौन जाने अतल पारावार में
डूबती कश्ती लिए बस वह चला था धार में
आँधियों का सामना था पाल दुर्दिन के कसे
लेख थे ऐसे करम के टूट कर तारे हँसे

मैं न आया आप तट तक चीर झंझावात को
बाँह भर तुमने मुझे दी शक्ति उमड़े ज्वार की।
मैं अकेला लिख रहा था जब कहानी हार की॥

पंख थे मेरे न अपने, गगन था मेरा नही
नीड़ था मेरा न कोई, चमन था मेरा नही
किन्तु लौटा मैं प्रवासी देश मे मकरद के
भर गये सब घाव अपने आप घायल छन्द के

बाँसुरी बन आपने ही स्वर दिये ऐसे मुझे
जिन्दगी छवि गढ़ रही है आज तक मनुहार की।
मैं अकेला लिख रहा था जब कहानी हार की॥

●

बदला नहीं हमारा मन है

माना बड़ी हो गई आँखें
माना बदल गया अंजन है।
'तुम' से 'आप' कहाने वाला
यह कैसा बेगानापन है॥

ज्यादा दूर नही निकली हैं
उड़ती मुक्त हंस की पाँतें
बात फेर मत शुरू करो तुम
पिंजड़े के सुगने की बातें

आह ! गई बेला अनुरागी
अपनी उम्र हुई ज्यो बागी

यह भी माना सँवर गये हैं
दो तुतलाते बोल अधर के

लेकिन अर्थ बदलने वाला
यह कैसा शरमाया क्षण है
'तुम' से 'आप' कहाने वाला
यह कैसा बेगानापन है

कैसे है यह मन के बन्धन
दिखते नही मगर कसते है।
पता नही विश्वास कौन से
बिखरे सपनो मे बसते हैं॥

चीर रही बादल को बिजली
किन्तु बरसती लगन न बदली

अब भी भोर सिंदूरी उगती
अब भी शाम रँगीली लगती

तुम बदले से नही, तुम्हारा
बदल गया कैसे दर्पण है।
'तुम' से 'आप' कहाने वाला
यह कैसा बेगानापन है॥

कितने दिन तक और जिन्दगी
जजीरो मे बँधी रहेगी
कब तक हम सब वही कहेगे
दुनियादारी जिसे कहेगी

है उदास अनखेली टोली
गुच्ची पर अनपीटी गोली
तुमको कसम खिलौनो की है
घर लौटू पर इतना कहदो

'बदला सिर्फ देह का दर्शन
बदला नही हमारा मन है'।
'तुम' से 'आप' कहाने वाला
यह कैसा बेगानापन है॥



सावधान संकल्प हो गये

अंकित उर मे छटा तुम्हारी
रोम रोम मे मादकता
स्वप्न सेज से उठकर, शायद अभी गई हो तुम ।

सूंघी सी यह गध किसी की अब भी बिखर रही है
उलझ उलझ चचल अलको मे बिजली भी सँवर रही है
अब भी कोई रूप नयन के तल तक झुका हुआ है
अब भी किसी समर्पित सुख का झोका रुका हुआ है

अब भी अचरज सहम रहा है
हलचल करती कलियो मे
उर उपवन से होकर, शायद अभी गई हो तुम ॥

कानो का अधिकार छीनकर मन आहट लेता है
रेखाओ से आकारो तक स्वर परिचय देता है
अब भी देख दिये को काजल अँगुली दिखा रहा है
भर भर बाँह उमर का दर्शन कोई लिखा रहा है

सिहर रहा आकार तुम्हारा
अब भी उजले दर्पण मे
अपने आप शरमकर, शायद अभी गई हो तुम ।।

कितना आज उनीदा अम्बर है बेहोश सितारे
शायद तुम ही निकल गई हो, करती हुई इशारे
वही इशारे जिस पर सारी दुनिया मिटकर जीती
बुरे दिनो मे जिसके बल पर सहज हलाहल पीती

सावधान सकल्प हो गये,
नया जोश, विश्वास नया
ऐसी लगन छोडकर, शायद अभी गई हो तुम ।।

*

आगे बहुत शेष हैं डेरे

आओ आज तोड़ ही डालें अपने सभी वहम के घेरे।
पता नहीं मैं कितना तेरा, पता नहीं तुम कितने मेरे॥

तुमने नहीं बुलाया मुझको
अपने आप नहीं मैं आया
बाँध गया हमको अनजाने
कोई क्षण बेसुध अनगाया

गाते गाते मुखर हो गया मूक निवेदन, बुरा न मानो
आदिकाल से इसी बहाने लगा रहा हूँ भू पर फेरे।
पता नहीं मैं कितना तेरा, पता नहीं तुम कितने मेरे॥

कोई रूप आइना कोई
दृष्टि मिली हमको बेगानी
काजल का क्या दोष, नज़र से
उतर रहा मौसम का पानी

अपराधी आँखों के आँगन इतने रंग नहीं बिखराओ
जितना समझ रहे तुम, उतने होते कब रंगीन बसेरे।
पता नहीं मैं कितना तेरा, पता नहीं तुम कितने मेरे।।

अर्थ नहीं हम गलत चल पड़े
फिर भी सही नहीं सब राहें
क्योंकि अपरिचित बहुत मंजिलें
बढ़ी असीमित अपनी चाहें

घबराकर हर बार न पूछो कितनी दूर कहाँ है चलना
पीछे बहुत चट्टियाँ छूटी, आगे बहुत शेष हैं डेरे।
पता नहीं मैं कितना तेरा, पता नहीं तुम कितने मेरे।।

•

प्रेरणा : बात अधिकारों की

चम्पा की पाँखुरी पर
मैंने
एक मूंगे को
चाँदनी मे
नहाते हुए देखा।
मैंने तुम्हें देखा॥

/

आकृतियाँ थी नही जहाँ
मैंने
स्वर के धनु
तोड-तोड
खींचदी अक्षर की रेखा।
मैंने तुम्हे लेखा ॥

लहर ने चाँद
चाँद ने कली
कली ने बहार को देखा

बहार ने भ्रग
भ्रग ने रूप
रूप ने प्यार को देखा

प्यार ने मन
मन ने दर्द
दर्द ने रग जीवन के
इस तरह से कभी हमने तुम्हे
कभी तुमने हमे देखा।

२ बात करें अधिकारों की

सुधि की सांझ ढली तुम आये
महकी रात सितारों की।
मिलन पर्व है पिया हठीले
बात करें अधिकारों की॥

घेरे घटे दूरियाँ सिमटी
सीमित धरती और गगन
लहर लहर नयनों से छलकी
सुख सपनों की झील मगन
घूंघट उघरी चन्द्रकलाएँ
उफनी प्यास किनारों की।
बात करें अधिकारों की॥

यो रहस्य के बिखरे मोती
मुस्कानों में पिरो नहीं
ठहर गयी है मन गजरों की
गंध बावरी यहीं कहीं
वार चुका हूँ उमर आप पर
फूली हुई बहारों की।
बात करें अधिकारों की॥

इतना मत प्यार करो

इतना मत प्यार करो
पथी प्रण हार चले।
होने दो समझौता
बादल से बिजली का
सावन है दूर अभी
धरती की कजली का

ढलने दो मापों को
तपने दो तापों को
इतनी मत आतुर हो

मन में मल्हार भरो
उभक उभक मेघों में
टुबकती फुहार चले।
पंथी प्रण हार चले ॥

कागज के फूलों का
प्रचलन है होने दो
रंगों को रंगों की
टोहों मे खोने दो

ढोने दो भारों को
जीतो को हारो को
इतनी मत व्याकुल हो

दीये को द्वार धरो
सई शाम याद जगे
रात भर खुमार चले।
पथी प्रण हार चले ॥

मिलते हैं कूल सभी
तैरती कहानी को
काटना जरूरी पर
धारा के पानी को

इतना मत प्यार करो

इतना मत प्यार करो
पंथी प्रण हार चले।

होने दो समझौता
बादल से बिजली का
सावन है दूर अभी
धरती की कजली का

ढलने दो मापों को
तपने दो तापों को
इतनी मत आतुर हो

मन में मल्हार भरो
उझक उझक मेघों में
दुबकती फुहार चले।
पंथी प्रण हार चले।।

कागज के फूलों का
प्रचलन है होने दो
रंगों को रंगों की
टोहों में खोने दो

ढोने दो भारों को
जीतों को हारों को
इतनी मत व्याकुल हो

दीये को द्वार धरो
सई शाम याद जगे
रात भर खुमार चले।
पंथी प्रण हार चले।।

मिलते हैं कूल सभी
तैरती कहानी को
काटना जरूरी पर
धारा के पानी को

कितनी सरल ज़िन्दगी लगती

उलझन, घुटन, प्रश्न, आशंका जीवन भर के साथी मेरे
फिर भी प्राण ! पास तुम हो तो,
कितनी सरल ज़िन्दगी लगती ।

इतनी ऊँची तम की चोटी
अन उसके नित सूरज डूबे
लगता है मैं भी चल दूँगा
यों ही गाँठ बाँध मनसूबे

क्या होगा गीतों के गाये
भरमों से मन को समझाये

सूख रहा हूँ इसी सोच मे पर जाने क्यो मुझे अचानक
तेरे स्वप्निल नील दृगो मे
तिरती तरल जिन्दगी लगती ।

ऐसी आज घटायें उमडी
झुलस रही है दूब सलोनी
प्यासे रग प्रेत से भटके
हर इच्छा लग रही अलोनी

कजली रुकी, थमे सब झूले
कोयल मौन, मयूरा भूले

देख रहा हूँ खेल प्रकृति का मैं मतिभ्रम हारा सा लेकिन
पलभर तेरे मुसकाने से,
खिलती कमल जिन्दगी लगती ।

किर्च किर्च युग घुन खाया है
दाग लगा हर एक रूप है
दिन का अहम् मारता पाला
खिलते ही बुझ रही धूप है

ऐसे क्षण यदि प्रीत न होती
जाने कहाँ आस्था खोती

सचमुच रूपाकार हुई है यह अनुरागिन माटी तुममे
सग तुम्हारे भूडोलो पर,
मुझको अटल जिन्दगी लगती ।।

मुझे छूलो : एक निमिष

मुझे छूलो निखर जाऊँ।
अभी तक हूँ कुहासे में
उधर जाऊँ उधर जाऊँ॥

पड़ी चुप घास पर वीणा अभी पद चाप सुनती है
तुम्हारी उँगलियों के एक दो एहसास बुनती है
खनकती चूड़ियाँ, सुन जिन हथेली मँहदियों के स्वर
रखो वह हाथ हाथों पर
बुझे संकल्प गरमाऊँ।
मुझे छूलो निखर जाऊँ॥

बहुत खोया बहुत पाया नयन के आसमानो ने
मनाये सब नही तारे मगर ऐसे बहानो ने
दबाती होठ दांतो से उधर जो दृष्टि सकोची
मुखर करदो उसे, मैं भी

निहालो की उमर पाऊँ।
मुझ छूलो निखर जाऊँ॥

करोडो वर्ष उमसो के जहाँ सगीत रहते हैं
कुरेदन अनलिखी कोई जिसे भूकम्प कहते हैं
वहाँ आओ झरोखो तक भरे यह गीत का दिन है
सुलझलें प्रश्न तलछट के

नितर जाऊँ नितर जाऊँ।
मुझे छूलो निखर जाऊँ॥

•

एक निमिष

दे दो ना प्राण मुझे
मदिरायी पलकों का
सपनाया एक निमिष ।

पग तचती पगडंडी
लक्षहीन लिपटी है
प्यास मृगतृषाओं की
अधरों पर सिमटी है

भेड़ो मत द्वार आज
आया सब छोड़ काज
दे दो ना प्राण मुझे

लहरायी अलकों का
निंदियाया एक निमिष ।

कंदीलें उलझन की
जहाँ तहाँ जलती हैं
मनमांगे साँचों में
चाहें कब ढलती हैं

गाये उन्मेष नया
गूँजे परिवेश नया
दे दो ना प्राण मुझे

गीताये होठों का
अनगाया एक निमिष ।

कुछ माँगें रंकों की
अधिकारी होती हैं
देनदार उमरें ये
जग प्यारी होती हैं
मौसम है देने का
बदले में लेने का
दे दो ना प्राण मुझे
गदरायी बाहों का
भर पाया एक निमिष ।



कर सकता इन्सान सभी कुछ

मिलना और बिछुडना हमको जनम जनम का फेरा है।
देख प्यार बिन रीता जीवन, सूना रैन बसेरा है॥

लम्बी राह साथ से कटती, दुर्दिन मीठी बातो से
मधुर प्रेरणा हमे सिखाती टकराना आघातो से
कभी किसी के लिये नयन का सचित सपन छलक जाता
झूठे बन्धन सारे जग के मन का मन से सच नाता

पल पल रूठो नही सॉवरी सुबह शाम का डेरा है।
देख प्यार बिन रीता जीवन, सूना रैन बसेरा है॥

डूबे डूबे सपन समन्दर, रैन किसी की अकुलाई
किसी किसी का प्रीतम प्यारा, मिला किसी को हरजाई
कोई मंजिल छू लेता है पाता कोई राह नही
कही तपाती छाँह किसी को, कही सिराती दाह नही

सुख साथी तकदीर कर्म का, दुख मिलता बिन हेरा है।
देख प्यार बिन रीता जीवन, सूना रैन बसेरा है॥

मिल जाये विश्वास किसी का इससे ज्यादा सुख क्या है
छल जाये अपना ही कोई इससे ज्यादा दुख क्या है
अमृत हो या मिले हलाहल प्यास लगी है पीना है
कितनी है लाचार जिन्दगी जीना तब तक सीना है

कर सकता इन्सान सभी कुछ किन्तु समय का चेरा है।
देख प्यार बिन रीता जीवन, सूना रैन बसेरा है॥

तुम मेरे हो यही बहुत है और यहाँ क्या मिलना है
माला मे मुस्कान पिरोदे उसी फूल का खिलना है
आँधी जिन्हे न भटका पाये सग उसी को कहते हैं
तन से भटक गये तो मन मे निस दिन रमते रहते हैं

जीवन भूल, विरह की रजनी, केवल प्रीत सवेरा है।
देख प्यार बिन रीता जीवन, सूना रैन बसेरा है॥

•

इतना अपना लिया आपने

इतना अपना लिया आपने शेष एक उपकार नही है।
तुम्हें समर्पित करूँ पास मे ऐसा कुछ उपहार नही है॥

इतना असर तुम्हारे स्वर मे सारे साज गूँजने लगते
ऐसा है आकर्षण जिससे तुमको सभी पूजने लगते
इस गुजन पूजन से आगे एक और तस्वीर तुम्हारी
जिसके रग रग पर अकित अनुरागिन आसक्ति हमारी

तुम्हे सिगारूँ लेकिन ऐसी धूप नही बँधती मुट्ठी मे
बिना सिगारे हुए आपके मेरा भी शृगार नही है।
तुम्हें समर्पित करूँ पास मे ऐसा कुछ उपहार नही है॥

मोरछली सी मधुर छाँव तुम, तपन गोद में नींद ले रही
तुम हो सौरभ साँस कुन्ज की जो रह रह आवाज दे रही
ज्यों जमना का मस्त हिलोरा ऐसी ही कुछ प्रीत तुम्हारी
लहर लहर पर लिखदी तुमने गीत गुनी हर प्यास हमारी

तुम्हें गुलाबों में देखा है तुमको बाँधा है पलकों में
तुमसे ज्यादा और किसी को मुझमे इतना प्यार नही है।
तुम्हे समर्पित करूँ पास मे ऐसा कुछ उपहार नही है॥

बाहों में विस्तार भर लिया तुमने मौतिक थकन, दाह का
मजिल की परवाह करें वे जिन्हें भरोसा नही राह का
जितना दिया उसे कह देना मेरे वश की बात नही है
तुमसे सुन्दर रची विधाता ने कोई सौगात नही है

ओ रे उफने ज्वार, दे चुकी बूँद तुम्हें मरजाद कभी की
जिसकी सीढ़ी चढ सागर पर आता कभी उतार नही है।
तुम्हे समर्पित करूँ पास मे ऐसा कुछ उपहार नही है॥

•

शुद्धि पत्र

क्रम	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१	२४	८	दीवारो की	दीवारो को
२	२७	९	ठोके के कील	ठोके कील
३	५६	५	अघायेगी	अघायेगी
४	६७	४	नजरो	नजरो
५	६९	११	घामो	घामो
६	६९	११	अँगूर	अगूर
७	८६	८	हैं ॥	हैं
८	९५	८	पढे	पढें
९	१०८	२	पांवडे	पांवड़े
१०	१०९	६	रुह	रूह
११	१०९	१०	सहित	रहित
१२	११९	२	अधियार	अँधियार
१३	१२१	५	अघेरी	अँधेरी
१४	१२१	७	घ्रणा	घृणा
१६	१३१	५	घ्रणा	घृणा
१७	१३४	७	भूला	भूला
१८	१३४	२१	भूला	मूला
१९	१३९	२३	फीर	फिर
२०	१४५	१५	हँस	हस
२१	१५४	२५	रूई	रुई
२२	१५९	१	पनाये	पैनाये

12161